RNI No. UPHIN/2000/03766
ISSN No. 2581-3528 ₹ : 20

केशव संवाद

जनवरी-2026

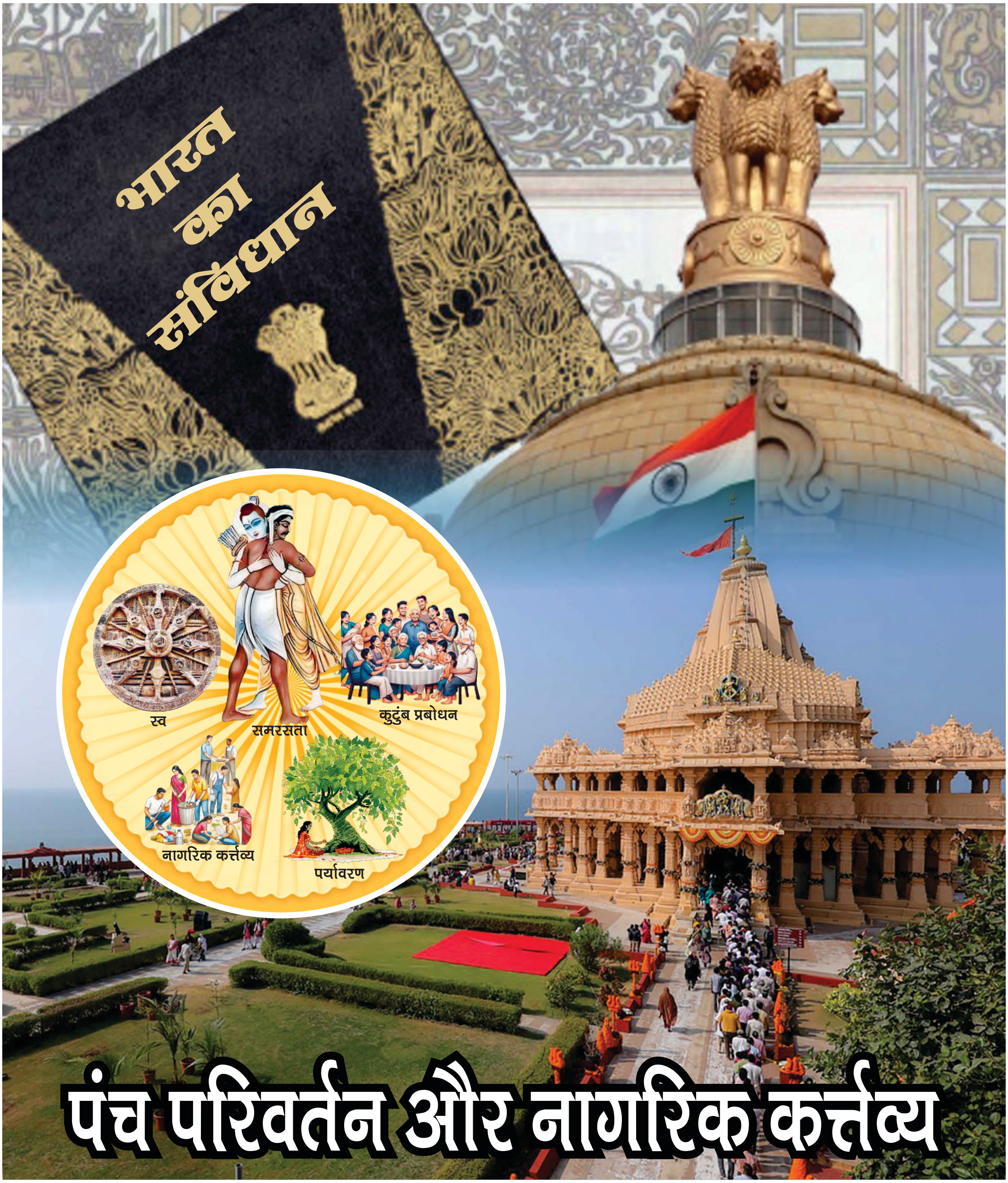

पंच परिवर्तन और नागरिक कर्त्तव्य

प्रेरणा विमर्श 2025 की झलकिंया

केशव संवाद

RNI No. UPHIN/2000/03766

ISSN No. 2581-3528

जनवरी, 2026

वर्ष : 26 अंक : 01

सलाहकार समिति

उदयभान सिंह, रविन्द्र सिंह चौहान
रविन्द्र कुमार श्रीवास्तव, मुकेश कुमार

संपादक

कृपाशंकर

कार्यकारी संपादक

प्रोफेसर (डॉ.) नीलम कुमारी

प्रबंध निदेशक

डॉ. अनिल कुमार निगम

प्रबंध संपादक

पंकज राणा

पृष्ठ संयोजन

वीरेंद्र पोखरियाल

संपादकीय कार्यालय

प्रेरणा शोध संस्थान न्यास
सी-56/20 सेक्टर-62, नोएडा -201309
फोन न. 0120 4565851
ईमेल : keshavsamvad@gmail.com
वेबसाइट : www.prernasamvad.in

स्वामी पंकज कुमार की ओर से मुद्रक/प्रकाशक रमन चावला द्वारा चन्द्र प्रभु ऑफसेट प्रिंटिंग वर्क प्रा.लि. नोएडा से मुद्रित तथा केशव भवन 105 आर्यनगर सूरजकुंड रोड मेरठ से प्रकाशित

इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। संपादक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। सभी विवादों का निपटारा मेरठ की सीमा में आने वाली सक्षम अदालतों/फोरम में मान्य होगा। संपादक

विषय सूची

पंच परिवर्तन और नागरिक कर्तव्य : राष्ट्र निर्माण की चेतना....................05

नागरिक कर्तव्य बोध की संस्कारशाला राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की शाखा .07

डिजिटल नागरिकता और राष्ट्रीय चेतना..09

भारतीय ज्ञान परंपरा और नागरिक चेतना.......................................11

वेदों के आलोक में भारतीय ग्रंथों एवं संविधान की भाषा में नागरिक कर्तव्य....13

मीडिया विमर्श और जिम्मेदार नागरिक 15

वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भारतीय नागरिक...17

कर्तव्य बोध की जीवंत प्रतिमा : स्वामी विवेकानंद...............................19

मीडिया उपभोग और अभिव्यक्ति में नागरिक विवेक व उत्तरदायित्व..........21

स्वास्थ्य, स्वच्छता और नागरिक अनुशासन सामूहिक कर्तव्य की भारतीय दृष्टि..23

डिजिटल उन्माद और सामाजिक विवेक का संकट : सोशल मीडिया के दुष्प्रभाव 26

भारतीय संविधान एवं नागरिक कर्तव्य...27

युवाओं की ऊर्जा 29

समर्पण : एक साधना...31

आत्मनिर्भर स्टोरी...33

पाठकगण पत्रिका के बारे में अपने सुझाव एवं प्रतिक्रिया,'संपादक के नाम पत्र' शीर्षक से ई-मेल (keshavsamvad@gmail.com) के माध्यम से भेज सकते हैं। चुने हुए पत्रों को पत्रिका के अगले अंक में प्रकाशित किया जायेगा।

ISSN No. 2581-3528

संपादकीय...

लोकतंत्र केवल अधिकारों की उद्घोषणा भर नहीं है, बल्कि कर्त्तव्यों की सतत साधना का नाम है। इतिहास साक्षी है कि जब-जब नागरिकों ने अपने दायित्वों को समझा और उन्हें अपने आचरण में उतारा, तब-तब राष्ट्र ने प्रगति की नई दिशाएं खोजी। अधिकार लोकतंत्र की पहचान हैं, किंतु कर्त्तव्य उसकी आत्मा। आज के जटिल, तीव्र परिवर्तनशील और अनिश्चित वैश्विक परिदृश्य में नागरिक कर्त्तव्य की अवधारणा और भी व्यापक तथा बहुआयामी हो गई है, जिसमें परंपरा, दर्शन, मीडिया, डिजिटल संसार और राष्ट्रीय चेतना एक-दूसरे से गहराई से जुड़ गए हैं।

भारतीय सभ्यता में नागरिक कर्त्तव्यों की जड़ें अत्यंत प्राचीन हैं। वेदों में निहित 'ऋत' अर्थात् नैतिक व्यवस्था की अवधारणा समाज और राष्ट्र के संतुलन का मूल सूत्र रही है। "संगच्छध्वं संवदध्वं" का उद्घोष केवल सामूहिकता का आह्वान नहीं, बल्कि सामाजिक उत्तरदायित्व का शाश्वत संदेश है। भारतीय दृष्टि में राजा हो या प्रजा, सभी के लिए धर्म का पालन अनिवार्य बताया गया है, जहां धर्म का अर्थ केवल पूजा-पद्धति नहीं, बल्कि कर्त्तव्यनिष्ठ, मर्यादित और न्यायपूर्ण आचरण है।

भारतीय संविधान आधुनिक भारत का आधारग्रंथ है। यह मात्र शासन-व्यवस्था का ढांचा नहीं, बल्कि स्वतंत्रता संग्राम की चेतना, सामाजिक न्याय की आकांक्षा और राष्ट्रीय एकता के संकल्प से निर्मित एक जीवंत दस्तावेज है। संविधान के भाग 4 (क) में वर्णित मूल कर्त्तव्य भारतीय नागरिक के चरित्र, आचरण और सामाजिक उत्तरदायित्व की स्पष्ट रूपरेखा प्रस्तुत करते हैं। ये कर्त्तव्य हमें यह स्मरण कराते हैं कि राष्ट्र केवल अधिकारों से नहीं, बल्कि अनुशासित और जिम्मेदार नागरिकों से सशक्त बनता है।

इन मूल कर्त्तव्यों को केवल पढ़ने का विषय नहीं, बल्कि जीवन में उतारने की प्रक्रिया माना जाना चाहिए। नागरिक कर्त्तव्य की इस संस्कारपरक साधना को यदि किसी संगठन ने निरंतर और मौन साधना रूप में आगे बढ़ाया है, तो वह है राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ। शाखा जैसे संस्कार केंद्रों के माध्यम से नागरिक कर्त्तव्य बोध को उपदेश नहीं, बल्कि जीवन-शैली के रूप में विकसित किया जाता है। यही संस्कार दीर्घकाल में राष्ट्र निर्माण की आधारशिला बनते हैं।

आज का विश्व एक बार फिर इतिहास के उस चौराहे पर खड़ा प्रतीत होता है, जहां आगे का मार्ग या तो शांति, सहयोग और मानवीय मूल्यों की ओर जाता है अथवा विनाश, युद्ध और अविश्वास की अंधी सुरंग की ओर। वैश्विक राजनीति में बढ़ता तनाव, महाशक्तियों के बीच टकराव, हथियारों की होड़, साइबर युद्ध और वैचारिक ध्रुवीकरण यह संकेत देते हैं कि तृतीय विश्वयुद्ध की आशंका केवल कल्पना मात्र नहीं रह गई है। ऐसे समय में भारत जैसे प्राचीन सभ्यता-संपन्न राष्ट्र की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है।

भारत का दृष्टिकोण केवल भौगोलिक या सामरिक नहीं, बल्कि सांस्कृतिक, नैतिक और मानवीय है। यही दृष्टि संविधान के मूल मूल्यों -न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व में स्पष्ट रूप से प्रतिबिंबित होती है। ये मूल्य हमें यह सिखाते हैं कि वास्तविक शक्ति हथियारों में नहीं, बल्कि संयम, विवेक और नैतिक साहस में निहित होती है। यही भाव राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के 'स्वबोध' में भी परिलक्षित होता है, जो राष्ट्र को आत्मबोध और आत्मसंयम की दिशा देता है।

किसी भी राष्ट्र का भविष्य उसके संविधान की धाराओं से अधिक उसके नागरिकों के आचरण से निर्धारित होता है। आज अधिकारों की चर्चा जितनी मुखर और व्यापक होती जा रही है, कर्त्तव्यों का बोध उतना ही क्षीण पड़ता दिखाई देता है। ऐसे समय में पंच परिवर्तन की अवधारणा, शाखा जैसी संस्कारशालाएं, वेदों में निहित सामाजिक दायित्व, स्वामी विवेकानंद की प्रेरक चेतना और सजग मीडिया विमर्श ये सभी मिलकर एक समग्र और संतुलित राष्ट्रदृष्टि का निर्माण करते हैं।

आज के युग में मीडिया विमर्श जनमत निर्माण की सबसे प्रभावी शक्ति बन चुका है। किंतु टीआरपी और सनसनी की होड़ में यदि मीडिया अपने नागरिक कर्त्तव्य को भुला दे, तो समाज दिशाहीन हो सकता है। मीडिया का दायित्व है कि वह अधिकारों के साथ-साथ कर्त्तव्यों की भी गंभीर चर्चा करे, सकारात्मक उदाहरण सामने लाए और राष्ट्रहित को विमर्श के केंद्र में रखे। मीडिया स्वयं एक उत्तरदायी नागरिक की भूमिका निभाए यही लोकतंत्र की सुदृढ़ता की शर्त है।

डिजिटल युग में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के साथ-साथ तथ्य-जांच, मर्यादा और राष्ट्रहित का ध्यान रखना भी नागरिक कर्त्तव्य बन चुका है। फेक न्यूज, ट्रोल संस्कृति और घृणा-भाषा समाज में अविश्वास और विभाजन को बढ़ावा देती हैं। मर्यादित, सत्यनिष्ठ और उत्तरदायी डिजिटल आचरण ही राष्ट्रीय चेतना को सुदृढ़ कर सकता है। "सत्यं वद, धर्मं चर" का उपनिषद् वाक्य आज के डिजिटल संसार में पहले से कहीं अधिक प्रासंगिक प्रतीत होता है।

अतः नागरिक कर्त्तव्य कोई बोझ नहीं, बल्कि राष्ट्र के प्रति प्रेम और उत्तरदायित्व की सहज अभिव्यक्ति है। जब पंच परिवर्तन का भाव जीवन में उतरता है, संस्कार केंद्र सक्रिय रहते हैं, वेदों का धर्म-बोध व्यवहार में दिखाई देता है, मीडिया जिम्मेदार बनता है, स्वामी विवेकानंद की चेतना जीवित रहती है और डिजिटल आचरण मर्यादित होता है, तब राष्ट्र स्वतः सशक्त और समरस बनता है। यही सच्ची राष्ट्रीय चेतना है और यही नागरिक धर्म। आइए हम सभी भारत के सच्चे , निष्ठावान व जिम्मेदार नागरिक होने के नाते राष्ट्र निर्माण में अपना सक्रिय योगदान दे।

प्रोफेसर (डॉ.) नीलम कुमारी

ISSN No. 2581-3528

पंच परिवर्तन और नागरिक कर्त्तव्य : राष्ट्र निर्माण की चेतना

डॉ. नीलम कुमारी
एसोसिएट प्रोफेसर, अंग्रेजी विभाग
किसान पी.जी. कॉलेज, सिंभावली (हापुड़)
चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ

भारत की आत्मा युगों से परिवर्तन की साधना करती रही है। जब–जब समाज दिशाहीन हुआ, तब–तब किसी न किसी रूप में राष्ट्रचेतना ने उसे नई राह दिखाई, और ऐसे ही कालखंड में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ भारतीय समाज की उस अंतर्निहित शक्ति को जाग्रत करने वाला प्रेरक दीपस्तंभ बनकर उभरा। संघ केवल एक संगठन नहीं, बल्कि राष्ट्रनिर्माण की सतत साधना है, जो व्यक्ति से समाज और समाज से राष्ट्र तक के उत्थान का मार्ग प्रशस्त करता है।

आज के परिवर्तनशील वैश्विक परिदृश्य में भारत के सामने सामाजिक, सांस्कृतिक और नैतिक चुनौतियां खड़ी हैं। इन्हीं चुनौतियों का सकारात्मक और सशक्त उत्तर है, पंच परिवर्तन। सामाजिक समरसता, कुटुंब प्रबोधन, पर्यावरण संरक्षण, स्वदेशी जीवनशैली और नागरिक कर्त्तव्यबोध, ये पांच परिवर्तन राष्ट्र के पुनर्जागरण के प्राण तत्व व आधार स्तंभ हैं। ये परिवर्तन केवल विचार नहीं, बल्कि व्यवहार में उतरने वाली जीवन दृष्टि हैं, जो व्यक्ति को आत्मकेंद्रित से राष्ट्रकेंद्रित बनाती हैं।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पंच परिवर्तन के माध्यम से समाज को आत्मावलोकन और आत्मनिर्माण की प्रेरणा देता है। यह आह्वान करता है कि राष्ट्र का निर्माण केवल नीतियों से नहीं, बल्कि संस्कारित नागरिकों के चरित्र से होता है। जब व्यक्ति अपने आचरण में परिवर्तन लाता है, तभी समाज में स्थायी और सकारात्मक बदलाव संभव होता है।

वस्तुतः संघ पंच परिवर्तन द्वारा भारत को उसकी सनातन चेतना से जोड़ते हुए एक सशक्त, समरस और आत्मनिर्भर राष्ट्र के निर्माण का संकल्प जगाते हैं, जहां विकास केवल भौतिक नहीं, बल्कि नैतिक और सांस्कृतिक भी हो।

कदाचित यही कारण है कि भारतीय सभ्यता का इतिहास केवल घटनाओं का

क्रम नहीं, बल्कि सतत परिवर्तन और आत्मपरिष्कार की जीवंत परंपरा है। यहां परिवर्तन को कभी भी जड़ों से विच्छेद के रूप में नहीं देखा गया, बल्कि उसे मूल्य, संस्कार और कर्तव्य के माध्यम से समाज को सुदृढ़ करने का साधन माना गया। वर्तमान समय में "पंच परिवर्तन" का विचार इसी परंपरा का आधुनिक विस्तार है, जो नागरिक कर्त्तव्यों के साथ जुड़कर राष्ट्र निर्माण की एक नई और सार्थक दिशा प्रस्तुत करता है।

हितोपदेश में कहा गया है कि "उद्यमेन हि सिध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः।
न हि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगाः।।"

यह श्लोक स्पष्ट करता है कि केवल आकांक्षाओं से नहीं, बल्कि सक्रिय प्रयास से ही लक्ष्य प्राप्त होते हैं। पंच परिवर्तन भी इसी सक्रियता की मांग करता है, जहां नागरिक केवल दर्शक न रहकर राष्ट्र के निर्माण में सहभागी बनता है।

पंच परिवर्तन का मूल भाव व्यक्ति के भीतर से आरंभ होकर समाज और राष्ट्र तक विस्तार पाता है। इसका पहला स्वर आत्मबोध और स्वत्व की पहचान है। जब व्यक्ति अपनी सांस्कृतिक विरासत, इतिहास और मूल्यों को समझता है, तभी उसमें आत्मगौरव का भाव जाग्रत होता है। यह आत्मगौरव किसी अन्य के प्रति द्वेष नहीं, बल्कि अपने अस्तित्व के प्रति सम्मान से उपजता है। ऋग्वेद का मंत्र, "आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः,"

भारतीय दृष्टि की उदारता को प्रकट करता है। जब नागरिक अपने स्वत्व को पहचानता है, तब वह राष्ट्रहित में सोचने और कार्य करने के लिए प्रेरित होता है।

परिवार भारतीय समाज की रीढ़ रहा है या सामान्य शब्दों में कहे तो परिवार हमारे संस्कार की वह प्रथम पाठशाला है, जहां व्यक्ति में गुण और संस्कार रोपे जाते है। यहीं से व्यक्ति के चरित्र का निर्माण होता है। राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया परिवार से ही प्रारंभ होती है, क्योंकि यहीं से नागरिकता के प्रथम संस्कार पल्लवित होते हैं। परिवार में अनुशासन, सहअस्तित्व और कर्तव्यबोध का विकास ही आगे चलकर सामाजिक उत्तरदायित्व का आधार बनता है। भारतीय शास्त्रों में माता–पिता और गुरु को विशेष स्थान दिया गया है। महाभारत के वनपर्व के अध्याय 313 का 60वां श्लोक का अंश, "माता गुरुतरा भूमेः ख्यातः पित्रा गरीयसी।" यह संकेत करता है कि जिन संस्कारों से व्यक्ति का निर्माण होता है, वहीं

आगे चलकर राष्ट्र के चरित्र का निर्माण करते हैं। एक संस्कारित परिवार से ही सुसंस्कृत समाज व समुन्नत राष्ट्र का निर्माण होता है। यह सर्वमान्य सत्य है कि भारतीय परिवार अपने कर्त्तव्यबोध व धर्म के कारण विश्वविख्यात हैं। सम्पूर्ण विश्व के सामने राम का धर्म, कृष्ण का धर्म, भीम का धर्म अनुकरण कर उदाहरण स्वरूप हमारा परिवार बन रहे हैं। वर्तमान में भारतीय परिवारों का अध्ययन पाश्चात्य देश कर रहे हैं।

प्रकृति के प्रति संवेदनशीलता भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग रही है। पंच परिवर्तन का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष पर्यावरण संरक्षण है, जो आज केवल वैचारिक नहीं, बल्कि अस्तित्व का प्रश्न बन चुका है। भारतीय दृष्टि में प्रकृति भोग की वस्तु नहीं, बल्कि सहचर और माता के समान है। ईशोपनिषद् का मंत्र,"ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्," मनुष्य को यह बोध कराता है कि यह सारा संसार किसी एक का निजी स्वामित्व नहीं है। और 'माता भूमि पुत्रोऽहं पृथिव्याः' अर्थात पृथ्वी मेरी माता है और मैं पृथ्वी का पुत्र/ पुत्री हूं।

जब नागरिक इस भाव से प्रेरित होकर जल, जंगल और भूमि की रक्षा करता है, तब वह न केवल वर्तमान, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के प्रति भी अपना कर्त्तव्य निभाता है।

सामाजिक समरसता भारत की आत्मा रही है। विविध भाषाएं, वेश, परंपराएं और विचार होते हुए भी भारत एक राष्ट्र के रूप में खड़ा है। पंच परिवर्तन का यह पक्ष हमें भेदभाव से ऊपर उठकर समरस समाज के निर्माण की प्रेरणा देता है। प्राचीन ग्रंथों में उल्लिखित, "सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः," केवल प्रार्थना नहीं, बल्कि सामाजिक दृष्टिकोण है। जब नागरिक अन्याय, अस्पृश्यता और वैमनस्य के विरुद्ध खड़ा होता है, तब वह राष्ट्र की एकता को सुदृढ़ करता है। सामाजिक समरसता के बिना कोई भी राष्ट्र दीर्घकाल तक प्रगति नहीं कर सकता।

"स्व" केवल आत्मबोध नहीं, बल्कि राष्ट्रबोध का सशक्त माध्यम है। भाषा, भूषा, भजन, भोजन, भवन और भ्रमण , ये सभी हमारे जीवन के बाह्य रूप नहीं, बल्कि भारतीय संस्कृति की आत्मा हैं।

भाषा के माध्यम से विचारों का संप्रेषण होता है। मातृभाषा में व्यक्त भाव अधिक आत्मीय और प्रभावी होते हैं। संघ स्वदेशी भाषाओं को सम्मान देकर सांस्कृतिक आत्मनिर्भरता का संदेश देता है। भूषा व्यक्ति की पहचान होती है। भारतीय परिधान हमारी परंपरा, सरलता और मर्यादा के प्रतीक हैं, जो आत्मगौरव को जाग्रत करते हैं।

भजन मन को शुद्ध कर राष्ट्रसेवा की भावना से जोड़ते हैं। संघ के प्रार्थना गीत त्याग, समर्पण और एकता का भाव उत्पन्न करते हैं। भोजन केवल शरीर का पोषण नहीं, बल्कि सात्त्विक जीवन का आधार है। स्वदेशी, सादा और स्वास्थ्यवर्धक आहार आत्मनिर्भर समाज की नींव रखता है।

भवन हमारे संस्कारों के केंद्र होते हैं, सरल, उपयोगी और सामाजिक समरसता को बढ़ाने वाले। भ्रमण देश के विविध भूभागों से परिचय कराता है, जिससे "विविधता में एकता" का अनुभव होता है।

संघ का "स्व आधारित" दृष्टिकोण व्यक्ति को संस्कारवान नागरिक बनाकर राष्ट्र को सशक्त करने का मार्ग प्रशस्त करता है। आज के समय में अधिकारों की चर्चा जितनी प्रबल है, उतनी ही आवश्यकता कर्त्तव्यों की स्मृति की भी है। पंच परिवर्तन नागरिक कर्त्तव्यों को केंद्र में रखता है। संविधान ने नागरिकों को अधिकार दिए हैं, परंतु उनके साथ मूल कर्त्तव्यों का भी निर्देश किया है। कानून का पालन, सार्वजनिक संपत्ति की रक्षा, स्वच्छता, अनुशासन और राष्ट्रहित को सर्वोपरि रखना, ये सभी नागरिक कर्त्तव्य हैं। गीता का श्लोक– "कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन" निष्काम कर्त्तव्य की भावना को पुष्ट करता है। जब नागरिक फल की अपेक्षा किए बिना अपने कर्त्तव्य का पालन करता है, तब राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया सुदृढ़ होती है।

संघ द्वारा प्रतिपादित पंच परिवर्तन का सार यह है कि राष्ट्र निर्माण केवल शासन या संस्थाओं की जिम्मेदारी नहीं, बल्कि प्रत्येक नागरिक का दायित्व है। छोटे–छोटे कार्य, जैसे समय पालन, ईमानदारी, सहयोग और संवेदनशीलता, राष्ट्र की नींव को मजबूत करते हैं। यह नई दिशा भौतिक विकास के साथ–साथ नैतिक और सांस्कृतिक उत्थान को भी महत्व देती है। आत्मनिर्भर भारत की कल्पना भी तभी साकार हो सकती है, जब नागरिक आत्मनिर्भर सोच और कर्त्तव्यनिष्ठ आचरण अपनाए।

भारतीय दर्शन सदा व्यक्ति और समाज के संतुलन पर बल देता आया है। कठोपनिषद् का आह्वान–"उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत" आज भी उतना ही प्रासंगिक है। यह हमें आलस्य और उदासीनता त्यागकर जागरूक नागरिक बनने का संदेश देता है। पंच परिवर्तन इसी जागरण का शास्वत स्वर है, जो हमें अपने दायित्वों का बोध कराकर राष्ट्र निर्माण की उज्ज्वल दिशा दिखाता है।

अंततः यह कहा जा सकता है कि पंच परिवर्तन और नागरिक कर्त्तव्य एक–दूसरे से अविभाज्य हैं। जब नागरिक अपने कर्त्तव्यों के प्रति सजग होता है, तब परिवर्तन स्वतः सकारात्मक दिशा में प्रवाहित होता है। और जब परिवर्तन जीवन पद्धति बन जाता है, तब राष्ट्र केवल प्रगति ही नहीं करता, बल्कि एक आदर्श के रूप में विश्व के सामने स्थापित होता है। यही पंच परिवर्तन और नागरिक कर्त्तव्य से उपजने वाली राष्ट्र निर्माण की सनातन चेतना और आशावादी दिशा है।

उस दया निधि, करुणानिधि, सर्व सर्व शक्तिमान से प्रार्थना है कि

वह शक्ति हमे दो दयानिधे।
कर्त्तव्यमार्ग पर डट जावे।।
पर पीड़ा पर उपकार में हम।
ये जीवन सफल बना जावे।। ■

ISSN No. 2581-3528

नागरिक कर्त्तव्य बोध की संस्कारशाला राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की शाखा

डॉ. अशोक कुमार चौधरी
स्वतंत्र लेखक व प्रसिद्ध इतिहासकार

भारतीय लोकतंत्र केवल अधिकारों की संरचना नहीं है, वह कर्त्तव्यों की जीवंत परम्परा भी है। यदि अधिकार नागरिक को शक्ति प्रदान करते हैं, तो कर्त्तव्य उसे संस्कार देते हैं। अधिकार व्यक्ति को मांगना सिखाते हैं, जबकि कर्त्तव्य उसे देना सिखाते हैं। यहीं संतुलन भारतीय संविधान की आत्मा है।

भारत का संविधान दुनिया का विलक्षण संविधान है। यह बहुमत और न्याय का संगम है। भारत के संविधान को संरक्षित और सुरक्षित रखने की जिम्मेदारी सुप्रीम कोर्ट पर है। बहुमत से बनने वाली सरकार पर नहीं है। भारत में सुप्रीम कोर्ट को इतनी शक्ति प्राप्त है कि वो बहुमत से बनाए किसी कानून को भी खारिज कर सकता है। सन् 2015 में भारत की संसद द्वारा कोलोजियम को समाप्त करने के लिए बने कानून को समाप्त कर देना इसका उदाहरण है। वहीं दूसरी ओर भारत की संसद को भी इतना अधिकार प्राप्त है कि यदि सुप्रीम कोर्ट कोई ऐसा फैसला दे दे, जिससे जनजीवन पर नकारात्मक प्रभाव पडता हो, तो संसद उस फैसले को भी पलट सकती है। जैसे संसद द्वारा सन् 2018 में एससी–एसटी एक्ट पर संसद ने न्यायपालिका द्वारा दिए फैसले पर रोक लगा दी है।

भारतीय संविधान की यह विशेषता, जहां सुप्रीम कोर्ट या संसद कोई भी निरंकुश होने की स्थिति में नहीं है। संविधान की इस अवस्था को दुनिया में अनूठा बनाती है।

संविधान के भाग–4 (क) में वर्णित मूल कर्त्तव्य भारतीय नागरिक के चरित्र, आचरण और सामाजिक उत्तरदायित्व की रूपरेखा प्रस्तुत करते हैं। इन्हीं कर्त्तव्यों को जीवन में उतारने की संस्कारपरक प्रक्रिया को यदि किसी संगठन ने सतत् और मौन साधना के रूप में आगे बढ़ाया है, तो वह है राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ एक ऐसी संस्कारशाला, जहां शाखा के माध्यम से नागरिक कर्त्तव्य बोध केवल पढ़ाया नहीं जाता, जिया जाता है।

जैसा कि भारतीय संविधान का प्रथम नागरिक कर्त्तव्य है– संविधान, उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्रध्वज और राष्ट्रगान के प्रति आदर। संघ की शाखा में दिन का आरंभ ही ध्वज प्रणाम से होता है। केसरिया ध्वज केवल एक प्रतीक नहीं, बल्कि त्याग, तपस्या और राष्ट्रनिष्ठा का साकार रूप है। यहां स्वयंसेवक संविधान की भावना को नारे नहीं, अनुशासन और शिष्टाचार के माध्यम से आत्मसात करता है। राष्ट्रगान और देशभक्ति, गीतों के माध्यम से राष्ट्र के प्रति सम्मान भाव बाल्यकाल से ही मन में अंकुरित हो जाता है।

1– देश हमें देता है सब कुछ हम भी तो कुछ देना सीखे।

2– शत–शत नमन भरत भूमि को अभिनंदन भारत माँ को।

3– चंदन है इस देश की माटी तपोभूमि हर ग्राम है।

4– राष्ट्र की जय चेतना का गान वन्देमातरम, जैसे गीत प्रत्येक भारतीय की रग– रग में राष्ट्रभक्ति का संचार करते है।

दूसरे कर्त्तव्य, स्वतंत्रता संग्राम की उच्च आदर्श परंपराओं का पालन और अनुसरण को संघ ने पूर्णतः आत्मसात किया।

संघ की स्थापना ही भारत माँ को परतंत्रता की बेड़ियों से स्वतंत्र करने के लिए हुए थी। 1925 में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रथम आद्य सरसंघचालक डॉ. केशव राव बलिराम हेडगेवार जी ने हिंदुत्व की रक्षा व माँ भारती को अंग्रेजों से स्वतंत्र करने के लिए संघ की स्थापना की ।

उसके पश्चात उनकी परंपरा को डा श्यामा प्रसाद मुखर्जी, पंडित दीनदयाल उपाध्याय व वर्तमान सरसंघचालक श्री मोहन भागवत जी ने संघ की परिपाटी को जारी रखा। संघ के बौद्धिक वर्गों में क्रांतिकारियों, संतों, समाजसुधारकों और राष्ट्रनायकों के जीवन प्रसंग केवल इतिहास नहीं, प्रेरणा बनकर प्रस्तुत होते हैं। यहां भगत सिंह का साहस, सुभाष का संगठन कौशल, गांधी का सत्याग्रह और विवेकानंद का आत्मविश्वास एक साझा विरासत के रूप में संस्कारित किया जाता है। स्वयंसेवक समझता है कि स्वतंत्रता केवल प्राप्त करने का विषय नहीं, उसे सतत् चरित्र और कर्म से सुरक्षित रखना भी उतना ही आवश्यक है।

संविधान का तीसरा कर्त्तव्य भारत की संप्रभुता, एकता और अखंडता की रक्षा को संघ ने अपना मूल मंत्र माना है। “राष्ट्र सर्वोपरि” है संघ की शाखा में कूट–कूट कर भरा जाता है। देश की एकता व अखंडता पर सर्वस्व न्योछावर करने का सर्वोत्तम उदाहरण है कश्मीर को एक करने के लिए डा. श्यामा प्रसाद मुखर्जी का बलिदान जो हमें अपने देश की एकता, अखंडता व संप्रभुता पर अपना सर्वस्व

ISSN No. 2581-3528

न्योछावर करने की प्रेरणा देता है। यह मूल मंत्र भाषा, प्रांत, जाति या पंथ से ऊपर उठकर भारत को एक सांस्कृतिक इकाई के रूप में देखने का दृष्टिकोण शाखा में विकसित करता है। सीमावर्ती क्षेत्रों में सेवा कार्य, आपदाओं में राहत, और सामाजिक समरसता के प्रयास राष्ट्रीय एकता को केवल विचार नहीं, व्यवहार बनाते हैं। यहां राष्ट्र की रक्षा हथियार से पहले चरित्र और एकजुटता से होती है यह बोध गहराई से बैठता है।

चौथा कर्त्तव्य देश की रक्षा और आह्वान पर राष्ट्रसेवा जिसे संघ ने अपना व्यहवार व आचरण में उतारा है। संघ स्वयंसेवकों का जीवन स्वयंसेवा का पर्याय है। बाढ़, भूकंप, महामारी या किसी भी संकट में संघ कार्यकर्ता बिना नाम–यश की आकांक्षा के उपस्थित रहता है। यह तत्परता किसी आदेश से नहीं, संस्कार से जन्म लेती है। शाखा में खेल, दंड, योग और सामूहिक अभ्यास के माध्यम से शारीरिक–मानसिक तैयारी की जाती है, ताकि आवश्यकता पड़ने पर नागरिक राष्ट्र के लिए सक्षम और सजग रहे।

जवाहरलाल नेहरू ने 1963 की गणतंत्र दिवस परेड में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को 1962 के भारत–चीन युद्ध के दौरान सेना और राष्ट्र की मदद के लिए उनके योगदान की सराहना करने और उन्हें सम्मानित करने के लिए आमंत्रित किया था, जिसमें संघ के हजारों स्वयंसेवकों ने सीमावर्ती क्षेत्रों में सेवाएं दीं थीं और राहत कार्यों में मदद की थी, जिससे प्रभावित होकर उन्हें इस नागरिक परेड में शामिल होने का निमंत्रण मिला था।

भारत–पाकिस्तान युद्धों (विशेषकर 1965) में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की भूमिका मुख्य रूप से नागरिक सहायता, मनोबल बढ़ाने और कानून–व्यवस्था बनाए रखने की थीं, जहां स्वयंसेवकों ने घायल सैनिकों की सेवा, हवाई अड्डों से बर्फ हटाने और यातायात संभालने जैसे कार्य किए, ताकि सेना अपने मुख्य मोर्चे पर ध्यान केंद्रित कर सके, जिसे तत्कालीन सरकार ने सराहा और शास्त्री जी ने सहयोग का आग्रह किया था। इतना ही नहीं केदारनाथ, मोरबी, सुनामी और भूकंप जैसी आपदाओं में राहत कार्यो में संघ सैदव अग्रणी खड़ा दिखाई देता है।

संविधान नागरिकों से सामाजिक समरसता और भाईचारे की भावना विकसित करने का आह्वान करता है तथा स्त्रियों की गरिमा के प्रतिकूल प्रथाओं का त्याग करने को कहता है। संघ की संस्कारशाला में 'सबका सम्मान' जीवनमूल्य है। जाति–भेद, ऊंच–नीच या अस्पृश्यता के लिए यहां कोई स्थान नहीं। सहभोज, सामूहिक खेल और सेवा कार्य सामाजिक दूरी को स्वतः मिटाते हैं। मातृशक्ति के सम्मान का भाव संघ में 'नारी तू नारायणी' की भावना से पोषित होता है–जहां नारी पूजनीय, सक्षम और समाजनिर्माण की सहभागी है। संघ में राष्ट्र को भारत माता संबोधित कर गर्व का अनुभव करता है।

पांचवां महत्वपूर्ण कर्त्तव्य है भारत की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण जिसे संघ द्वारा राम मंदिर संघर्ष असंख्य कारसेवकों के बलिदान के रूप देख सकते है। संघ भारतीय संस्कृति को संग्रहालय की वस्तु नहीं, जीवंत परंपरा मानता है। पर्व, लोकसंस्कृति, योग, संस्कृत के श्लोक, एकात्मकता सोत्र, लोकगीत और जीवनमूल्य सब मिलकर सांस्कृतिक चेतना को सुदृढ़ करते हैं। यहां आधुनिकता और परंपरा में संघर्ष नहीं, संवाद होता है। स्वयंसेवक सीखता है कि जड़ों से जुड़कर ही आकाश की ऊंचाइयों को छुआ जा सकता है।

प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा और प्राणिमात्र के प्रति करुणा भी संविधान का कर्त्तव्य है। संघ के सेवा आयामों में वृक्षारोपण, जल–संरक्षण, स्वच्छता अभियान और ग्राम विकास के प्रयास निरंतर चलते हैं। प्रकृति को 'उपभोग की वस्तु' नहीं, 'माता' के रूप में देखने का दृष्टिकोण पर्यावरणीय संतुलन की चेतना जगाता है। स्वयंसेवक समझता है कि आने वाली पीढ़ियों के प्रति उत्तरदायित्व भी राष्ट्रभक्ति का ही अंग है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानवतावाद और ज्ञानार्जन की भावना विकसित करना भी नागरिक कर्त्तव्य है। संघ की बौद्धिक परंपरा प्रश्न करने, तर्क करने और समाधान खोजने को प्रोत्साहित करती है। यहां आस्था और विवेक का संतुलन सिखाया जाता है। अंधविश्वास के स्थान पर अनुभव, अध्ययन और प्रयोग को महत्व दिया जाता है, ताकि समाज प्रगति के पथ पर आत्मविश्वास के साथ अग्रसर हो।

सार्वजनिक संपत्ति की रक्षा और हिंसा से दूर रहना संविधान का स्पष्ट निर्देश है। शाखा का अनुशासन नागरिक शिष्टाचार का अभ्यास है पंक्ति में चलना, समयपालन, सामूहिक उत्तरदायित्व और नियमों का पालन। यह सब सार्वजनिक जीवन में अनुशासित और शांतिपूर्ण आचरण की नींव रखते हैं। स्वयंसेवक सीखता है कि विरोध भी मर्यादा में हो और परिवर्तन भी रचनात्मक हो।

अंततः संविधान नागरिक से यह अपेक्षा करता है कि वह व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों में उत्कृष्टता के लिए प्रयत्न करे। संघ का आदर्श स्वयंसेवक 'मैं' से 'हम' और 'हम' से 'राष्ट्र' की यात्रा करता है। यहां उत्कृष्टता पद या पुरस्कार से नहीं, दायित्व और समर्पण से मापी जाती है। छोटा सा कार्य भी यदि श्रेष्ठ भाव से किया जाए, तो वह राष्ट्रनिर्माण की ईंट बन जाता है।

इस प्रकार राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की शाखा केवल व्यायामशाला नहीं, नागरिक कर्त्तव्य बोध की संस्कारशाला है जहां संविधान के अक्षर जीवन के संस्कार बनते हैं। यहाँ नागरिक अपने अधिकारों से पहले अपने कर्त्तव्यों को पहचानता है और समझता है कि सशक्त भारत का निर्माण संसद की दीवारों से अधिक, नागरिक के चरित्र से होता है। जब कर्त्तव्य चेतना जन–जन में जाग्रत होती है, तब लोकतंत्र केवल व्यवस्था नहीं, संस्कृति बन जाता है, Arya यही भारत की सनातन शक्ति है। ■

ISSN No. 2581-3528

डिजिटल नागरिकता और राष्ट्रीय चेतना

अमित शर्मा
असिस्टेंट प्रोफेसर, पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग
टेक्निया इंस्टीट्यूट ऑफ स्टडीज, आईपी यूनिवर्सिटी, दिल्ली

राष्ट्र केवल भू–भाग का नाम नहीं होता, वह एक जीवंत चेतना होता है, जो समय के साथ अपने स्वरूप को विस्तृत करती रहती है। राष्ट्रीय चेतना किसी भी राष्ट्र की आत्मा होती है। यह नागरिकों में देश के इतिहास, संस्कृति, संविधान, एकता और अखंडता के प्रति सम्मान और उत्तरदायित्व का भाव उत्पन्न करती है। भारत की राष्ट्रीय चेतना का स्वरुप ऊपर से भले ही परिवर्तनशील दिखे, किंतु उसका मूल भाव राष्ट्र के प्रति उत्तरदायित्व और समर्पण सदैव अटल रहा है। स्वतंत्रता संग्राम के दौर में यह चेतना 'वंदे मातरम्' और 'भारत माता की जय' जैसे नारों में प्रकट हुई, तो स्वतंत्रता के पश्चात संविधान निर्माण के माध्यम से इसने एक संगठित और संस्थागत रूप ग्रहण किया। आगे चलकर लोकतांत्रिक संस्थाओं के सशक्तिकरण ने राष्ट्रीय चेतना को नागरिक सहभागिता का आधार प्रदान किया। आज, जब भारतीय समाज तीव्र गति से डिजिटल माध्यमों से स्वयं को अभिव्यक्त कर रहा है, तब राष्ट्रीय चेतना का विस्तार भौगोलिक सीमाओं से आगे बढ़कर आभासी संसार तक पहुंच चुका है। यह वह ऐतिहासिक मोड़ है जहां नागरिक का प्रत्येक डिजिटल आचरण उसकी पोस्ट, उसकी प्रतिक्रिया और उसका संवाद राष्ट्र के चरित्र, सामाजिक समरसता और वैचारिक दिशा को प्रभावित करने लगा है। ऐसे परिवर्तित परिदृश्य में डिजिटल नागरिकता और राष्ट्रीय चेतना का संबंध केवल वैचारिक नहीं, बल्कि राष्ट्र–निर्माण की प्रक्रिया में निर्णायक भूमिका निभाने वाला तत्व बन चुका है।

डिजिटल युग ने सूचना के प्रवाह को अभूतपूर्व गति और व्यापकता प्रदान की है। आज विचार, भावनाएं और प्रतिक्रियाएं कुछ ही क्षणों में सीमाओं को लांघते हुए करोड़ों नागरिकों तक पहुंच जाती हैं और जनमानस को प्रभावित करती हैं। यह डिजिटल शक्ति जहां राष्ट्र के प्रति जागरूकता, एकता और सकारात्मक विमर्श को सुदृढ़ कर सकती है, वहीं विवेकहीन प्रयोग की स्थिति में भ्रम, विभाजन और वैचारिक विकृति को भी जन्म दे सकती है। इसलिए वर्तमान समय की सबसे बड़ी आवश्यकता यह है कि नागरिक स्वयं को केवल तकनीक का उपभोक्ता न माने, बल्कि एक सजग, अनुशासित और राष्ट्रनिष्ठ डिजिटल नागरिक के रूप में अपने कर्तव्यों को समझे और उनका निर्वहन करे, ताकि डिजिटल माध्यम राष्ट्र की चेतना को और अधिक सशक्त बना सकें।

डिजिटल नागरिकता का व्यापक अर्थ : डिजिटल नागरिकता को केवल इंटरनेट के प्रयोग की दक्षता के रूप में देखना एक सीमित दृष्टिकोण होगा। वास्तव में, डिजिटल नागरिकता उस चेतना का नाम है जिसमें व्यक्ति डिजिटल माध्यमों का उपयोग करते समय नैतिकता, संवेदनशीलता और उत्तरदायित्व का पालन करता है। यह व्यवहार की वह संहिता है, जो ऑनलाइन दुनिया में भी वही मर्यादा अपेक्षित करती है, जो भौतिक समाज में आवश्यक मानी जाती है।

एक जागरूक डिजिटल नागरिक यह समझता है कि उसकी ऑनलाइन उपस्थिति केवल व्यक्तिगत अभिव्यक्ति नहीं है, बल्कि वह समाज और राष्ट्र के सामूहिक मानस को प्रभावित करने वाली शक्ति भी है। इसलिए वह शब्दों के चयन, सूचनाओं के साझा करने और प्रतिक्रियाओं की तीव्रता में संयम बरतता है। डिजिटल नागरिकता व्यक्ति को अधिकारों के साथ–साथ कर्तव्यों का भी स्मरण कराती है, जिससे डिजिटल लोकतंत्र संतुलित और स्वस्थ बना रह सके।

राष्ट्रीय चेतना से युक्त डिजिटल नागरिक यह जानता है कि उसकी स्वतंत्रता राष्ट्र की एकता और अखंडता से अलग नहीं है। वह अधिकारों के साथ कर्तव्यों के संतुलन को स्वीकार करता है और यह मानता है कि डिजिटल मंचों पर उसका व्यवहार लोकतंत्र की मजबूती या कमजोरी दोनों का कारण बन सकता है। इस प्रकार डिजिटल नागरिकता आधुनिक राष्ट्रवाद का व्यवहारिक रूप बन जाती है।

सोशल मीडिया और राष्ट्रीय विमर्श : सोशल मीडिया आज के समय में राष्ट्रीय विमर्श का सबसे प्रभावशाली मंच बन चुका है। यह वह स्थान है जहां विचार गढ़े जाते हैं, जनमत प्रभावित होता है और सामाजिक प्रतिक्रियाएं आकार लेती हैं। सोशल मीडिया ने नागरिक को प्रत्यक्ष भागीदारी का अवसर दिया है और सत्ता तथा समाज के बीच संवाद को अधिक सुलभ बनाया है। यह लोकतंत्र की दृष्टि से एक सकारात्मक परिवर्तन है।

किन्तु सोशल मीडिया की यही शक्ति तब चिंता का विषय बन जाती है जब इसका उपयोग बिना विवेक और जिम्मेदारी के किया जाता है। अफवाहें, भ्रामक सूचनाएँ, घृणा फैलाने वाले संदेश और राष्ट्रविरोधी आख्यान इसी माध्यम से तीव्र गति से फैलते हैं। राष्ट्रवादी चेतना से

युक्त डिजिटल नागरिक सोशल मीडिया को उन्माद या विभाजन का औजार नहीं बनाता, बल्कि वह इसे सामाजिक एकता, राष्ट्रीय गौरव और सकारात्मक विमर्श का माध्यम बनाता है। वह जानता है कि एक असत्य पोस्ट भी समाज में अविश्वास और वैमनस्य का बीज बो सकती है।

इसलिए सोशल मीडिया पर जिम्मेदार व्यवहार आज आवश्यक बन चुका है। राष्ट्र के प्रति निष्ठा अब केवल नारों में नहीं, बल्कि डिजिटल आचरण में भी परिलक्षित होती है।

सूचना साक्षरता और विवेकपूर्ण राष्ट्रभाव : डिजिटल युग की सबसे बड़ी चुनौती सूचना की कमी नहीं, बल्कि उसकी अधिकता है। असंख्य स्रोतों से निरंतर आने वाली सूचनाओं के बीच सत्य और असत्य का भेद कर पाना एक गंभीर चुनौती बन गया है। यहीं वह स्थिति है जहां सूचना साक्षरता का महत्व सामने आता है।

सूचना साक्षर नागरिक वह है जो किसी भी समाचार, वीडियो या संदेश को बिना जांच–पड़ताल के स्वीकार नहीं करता। वह स्रोत की विश्वसनीयता, संदर्भ की प्रामाणिकता और सूचना के उद्देश्य को समझने का प्रयास करता है। राष्ट्रीय चेतना तभी सुदृढ़ हो सकती है जब नागरिक भावनात्मक उकसावे के बजाय तथ्यपरक सोच को अपनाए।

भ्रामक सूचनाएं केवल सामाजिक भ्रम ही नहीं फैलातीं, बल्कि वे राष्ट्रीय सुरक्षा और सामाजिक सौहार्द के लिए भी खतरा बन सकती हैं। इतिहास साक्षी है कि झूठे प्रचार और अफवाहों ने समाजों को तोड़ा है। इसलिए सूचना साक्षरता आज राष्ट्ररक्षा का एक अदृश्य लेकिन अत्यंत प्रभावी माध्यम बन चुकी है।

डिजिटल अनुशासन और लोकतांत्रिक मर्यादा : हमारे राष्ट्र में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता है। किंतु यह स्वतंत्रता अपने साथ कहीं अधिक अनुशासन और मर्यादा का बोध लाती है। डिजिटल अनुशासन का अर्थ अभिव्यक्ति पर प्रतिबंध नहीं, बल्कि अभिव्यक्ति में उत्तरदायित्व है। यह नागरिक को यह बोध कराता है कि असहमति भी शालीनता और तर्क के साथ व्यक्त की जानी चाहिए।

डिजिटल अनुशासन राष्ट्रीय चेतना को सुदृढ़ करता है, क्योंकि अनुशासित नागरिक ही लोकतंत्र को स्थिर और मजबूत बनाते हैं। जब डिजिटल प्लेटफॉर्म पर संवाद सम्मानजनक और तथ्यपरक होता है, तब राष्ट्रीय एकता को बल मिलता है। डिजिटल अनुशासन राष्ट्रीय चेतना का व्यवहारिक रूप है। जब नागरिक ऑनलाइन संवाद में भाषा की गरिमा बनाए रखता है, व्यक्तिगत आक्षेप से बचता है और कानूनसम्मत आचरण करता है, तब वह राष्ट्र की लोकतांत्रिक संस्कृति को सशक्त बनाता है। इसके विपरीत, अनियंत्रित डिजिटल व्यवहार समाज में विभाजन और अविश्वास को जन्म देता है। एक राष्ट्रवादी डिजिटल नागरिक यह समझता है कि डिजिटल स्पेस में अनुशासन बनाए रखना उतना ही आवश्यक है जितना समाज में कानून का पालन करना।

युवा वर्ग और डिजिटल राष्ट्र-निर्माण : भारत एक युवा राष्ट्र है और डिजिटल माध्यमों का सबसे सक्रिय उपयोगकर्ता भी युवा वर्ग ही है। इसलिए डिजिटल नागरिकता और राष्ट्रीय चेतना के निर्माण में युवाओं की भूमिका निर्णायक है। युवा ऊर्जा यदि विवेक और दिशा से जुड़ी हो, तो वह राष्ट्र–निर्माण की सबसे बड़ी शक्ति बन सकती है।

शिक्षा का उद्देश्य केवल तकनीकी कौशल देना नहीं, बल्कि नागरिक चेतना विकसित करना भी है। जब डिजिटल साक्षरता को राष्ट्रीय मूल्यों, संविधानिक आदर्शों और सामाजिक उत्तरदायित्व से जोड़ा जाता है, तब एक ऐसी पीढ़ी का निर्माण होता है जो डिजिटल रूप से सक्षम होने के साथ–साथ वैचारिक रूप से भी परिपक्व होती है। युवा जब डिजिटल माध्यमों पर राष्ट्र के पक्ष में तर्कपूर्ण, संतुलित और सकारात्मक हस्तक्षेप करते हैं, तब वे आधुनिक भारत के वैचारिक प्रहरी बन जाते हैं।

डिजिटल भारत और नागरिक दायित्व : डिजिटल भारत की परिकल्पना केवल तकनीकी प्रगति तक सीमित नहीं है। यह एक राष्ट्रीय अभियान है जिसका उद्देश्य शासन, समाज और नागरिक के बीच पारदर्शी, उत्तरदायी और सहभागी संबंध स्थापित करना है। ई–गवर्नेंस, डिजिटल सेवाएं और ऑनलाइन मंच नागरिकों को सशक्त बनाते हैं, किंतु यह सशक्तिकरण तभी सार्थक है जब नागरिक डिजिटल रूप से जिम्मेदार हों।

राष्ट्रनिष्ठ डिजिटल नागरिक सरकारी डिजिटल मंचों का उपयोग ईमानदारी, जागरूकता और सहभागिता के भाव से करता है। वह यह समझता है कि डिजिटल सुविधा का दुरुपयोग अंततः राष्ट्र की व्यवस्था को कमजोर करता है।

डिजिटल नागरिकता और राष्ट्रीय चेतना आधुनिक भारत की दो ऐसी धाराएँ हैं जो एक–दूसरे के बिना अधूरी हैं। डिजिटल युग में राष्ट्र की शक्ति केवल आर्थिक विकास या सैन्य सामर्थ्य से नहीं, बल्कि नागरिकों के डिजिटल आचरण, सूचना विवेक और नैतिक अनुशासन से भी निर्धारित होती है। सोशल मीडिया पर जिम्मेदारी, सूचना साक्षरता के माध्यम से विवेक और डिजिटल अनुशासन के द्वारा मर्यादा– ये सभी मिलकर एक जिम्मेदार नागरिकता का निर्माण करते हैं।

आज आवश्यकता है कि हम डिजिटल तकनीक को केवल सुविधा नहीं, बल्कि राष्ट्र के प्रति अपने कर्तव्य का विस्तार समझें। तभी एक ऐसा डिजिटल भारत आकार ले सकेगा, जो तकनीकी रूप से उन्नत होने के साथ–साथ वैचारिक रूप से सशक्त, सामाजिक रूप से समरस और राष्ट्रीय चेतना से ओतप्रोत हो। ■

ISSN No. 2581-3528

भारतीय ज्ञान परंपरा और नागरिक चेतना

प्राचीन ज्ञान, जीवन-दर्शन और आधुनिक नागरिक जीवन का समन्वय

प्रोफेसर (डॉ.) हरेन्द्र सिंह
सरकार द्वारा 'शिक्षक श्री' पुरस्कार से विभूषित
ख्यातिप्राप्त शिक्षाविद, शैक्षिक प्रशासक
प्रोफेसर एवं राष्ट्रवादी चिन्तक

भारतीय ज्ञान परंपरा मानव सभ्यता की उन सतत प्रवाहित धाराओं में है, जिसने ज्ञान को केवल बौद्धिक उपार्जन नहीं, बल्कि जीवन जीने की समग्र पद्धति के रूप में विकसित किया। यह परंपरा व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और प्रकृति, सभी के बीच संतुलन स्थापित करती है। आज के भारत में, जब हम संविधान, लोकतंत्र, डिजिटल युग और वैश्विक उत्तरदायित्वों की बात करते हैं, तब यह प्रश्न और अधिक प्रासंगिक हो जाता है कि क्या भारतीय ज्ञान परंपरा आधुनिक नागरिक चेतना को दिशा दे सकती है। उत्तर न केवल सकारात्मक है, बल्कि यह भी स्पष्ट है कि बिना इस परंपरा के आधुनिक नागरिकता नैतिक रूप से अपूर्ण रह जाती है।

भारतीय चिंतन का मूल आधार 'ऋत' और 'धर्म' की अवधारणा है। ऋग्वेद में कहा गया है "ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत।" अर्थात् तप, अनुशासन और साधना से ही सत्य और नैतिक व्यवस्था का उद्‌भव होता है। आधुनिक नागरिक जीवन में कानून, संविधान और शासन–व्यवस्था तभी प्रभावी हो सकती है, जब नागरिकों के भीतर नैतिक अनुशासन और सत्यनिष्ठा हो। केवल दंड और नियम नागरिक चेतना का निर्माण नहीं कर सकते; इसके लिए आंतरिक मूल्य आवश्यक हैं, जिनकी जड़ें भारतीय ज्ञान परंपरा में हैं।

उपनिषदों का आत्मबोध नागरिक चेतना का गहरा आधार प्रस्तुत करता है। ईशावास्योपनिषद् का उद्‌घोष "ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।" यह भाव आज के संदर्भ में सार्वजनिक संसाधनों, पर्यावरण और डिजिटल स्पेस तक विस्तृत हो जाता है। जब नागरिक यह समझता है कि जल, जंगल, भूमि, डेटा और सार्वजनिक मंच किसी एक व्यक्ति की निजी संपत्ति नहीं, बल्कि सामूहिक उत्तरदायित्व हैं, तभी वह उत्तरदायी नागरिक बन पाता है। स्वामी विवेकानंद का यह आग्रह कि राष्ट्र निर्माण का आधार चरित्र निर्माण है, इसी आत्मबोध का सामाजिक विस्तार है। उनके अनुसार केवल शिक्षित नहीं, बल्कि साहसी, त्यागी और सेवाभावी नागरिक ही भारत को महान बना सकते हैं। स्वतंत्र भारत में यह परंपरा राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ जैसे संगठनों के माध्यम से सामाजिक स्तर पर आगे बढ़ी। डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार का स्पष्ट मत था कि राष्ट्र का निर्माण सत्ता या शासन से नहीं, बल्कि समाज के चरित्र से होता है। यदि नागरिक अनुशासित, निःस्वार्थ और राष्ट्रनिष्ठ हों, तो किसी भी संविधान और व्यवस्था को सफल बनाया जा सकता है। संघ की शाखा–पद्धति व्यक्ति को समयपालन, सहयोग, समरसता और सेवा के संस्कार देकर नागरिक जीवन की प्रयोगशाला का रूप देती है। डिजिटल युग में साइबर आचरण, सूचना की सत्यता और सोशल मीडिया पर मर्यादा भी इसी व्यापक नागरिक चेतना का आधुनिक रूप हैं।

भारतीय परंपरा में नागरिकता का केंद्र अधिकार नहीं, बल्कि कर्तव्य है। मनुस्मृति का प्रसिद्ध कथन, "धारणाद् धर्म इत्याहुर्धर्मो धारयति प्रजाः।" यह बताता है कि समाज को धारण करने वाला आचरण ही धर्म है। भारतीय संविधान के मौलिक कर्तव्य इसी विचार के आधुनिक रूप हैं। स्वच्छता, पर्यावरण संरक्षण, राष्ट्रीय एकता और वैज्ञानिक दृष्टिकोण, ये सभी केवल संवैधानिक निर्देश नहीं, बल्कि भारतीय ज्ञान परंपरा से निकले नागरिक मूल्य हैं। महात्मा गांधी ने इसी विचार को आधुनिक संदर्भ में सत्य, अहिंसा और स्वराज्य की अवधारणा के माध्यम से प्रस्तुत किया। उनके लिए स्वराज्य केवल राजनीतिक स्वतंत्रता नहीं, बल्कि आत्मसंयम और आत्मानुशासन था। उनका यह कथन कि "कर्तव्यों का पालन ही अधिकारों की सबसे सशक्त सुरक्षा है", जो कि आज के नागरिक विमर्श में अत्यंत आवश्यक हो जाता है। भारतीय संविधान के मौलिक कर्तव्य इसी परंपरा की आधुनिक अभिव्यक्ति हैं। आज 'स्वच्छ भारत', 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' और 'डिजिटल इंडिया' जैसे अभियानों की सफलता भी नागरिक कर्तव्यबोध पर ही निर्भर है। गुरुजी माधवराव गोलवलकर ने यह रेखांकित किया कि संविधान राष्ट्र की आत्मा नहीं, बल्कि राष्ट्र की सांस्कृतिक चेतना ही संविधान को प्राणवान बनाती है।

उनका कथन, "राष्ट्र एक जीवंत सांस्कृतिक इकाई है," आधुनिक नागरिकता में सांस्कृतिक एकात्मता की अनिवार्यता को रेखांकित करता है।

श्रीमद्भगवद्गीता, कर्मयोग के माध्यम से नागरिक जीवन को दिशा देती है, "कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।" यह श्लोक आज के प्रशासन, राजनीति और सामाजिक जीवन में अत्यंत प्रासंगिक है। जब नागरिक, अधिकारी और जनप्रतिनिधि फल–आसक्ति से ऊपर उठकर कर्तव्य करें, तभी भ्रष्टाचार, अनैतिकता और अवसरवाद पर अंकुश लगाया जा सकता है। 'कर्तव्य पथ' जैसी आधुनिक प्रतीकात्मक अवधारणाएँ भी इसी कर्मप्रधान नागरिक दृष्टि को रेखांकित करती हैं। महर्षि अरविंद ने भी भारत को एक जीवंत आत्मा मानते हुए कहा कि उसकी वास्तविक शक्ति उसकी आध्यात्मिक चेतना में निहित है। उनके अनुसार भारत का वैश्विक योगदान राजनीतिक प्रभुत्व नहीं, बल्कि मानवीय मूल्यों का प्रसार है। यही दृष्टि नागरिक को केवल उपभोक्ता या मतदाता नहीं, बल्कि नैतिक सहभागी बनाती है।

भारतीय ज्ञान परंपरा का केंद्रीय तत्व लोककल्याण है। 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' की भावना आज सतत विकास लक्ष्यों, सामाजिक न्याय और समावेशी विकास के रूप में प्रकट होती है। पं. दीनदयाल उपाध्याय का एकात्म मानव दर्शन भी नागरिक जीवन के लिए संतुलित और समग्र दृष्टि प्रस्तुत करता है, जिसमें व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और प्रकृति के बीच सामंजस्य अनिवार्य है। यह दर्शन न तो व्यक्तिवाद की अति को स्वीकार करता है और न ही सामूहिकता के नाम पर व्यक्ति की उपेक्षा करता है। आर्थिक विकास तभी सार्थक है, जब वह अंतिम व्यक्ति तक पहुँचे। यह विचार अंत्योदय की अवधारणा में दिखाई देता है, जो भारतीय चिंतन की ही आधुनिक अभिव्यक्ति है। नागरिक चेतना का अर्थ केवल अपने अधिकारों की रक्षा नहीं, बल्कि समाज के कमजोर वर्गों के प्रति संवेदनशीलता भी है।

वाल्मीकि रामायण में संकेत मिलता है कि रामराज्य में नागरिक स्वयं धर्मनिष्ठ थे, इसलिए शासन न्यायपूर्ण था। इसलिए रामायण में भी वर्णित रामराज्य को केवल आदर्श शासन नहीं, बल्कि आदर्श नागरिक समाज के रूप में भी देखा जाना चाहिए। आधुनिक लोकतंत्र में भी सुशासन का आधार केवल नीतियाँ नहीं, बल्कि नागरिक चरित्र है। यदि नागरिक कर–चोरी न करें, नियमों का पालन करें और सार्वजनिक संपत्ति को अपना मानें, तो शासन स्वतः सुदृढ़ हो जाता है।

भारतीय ज्ञान परंपरा में शिक्षा का उद्देश्य चरित्र–निर्माण रहा है। तैत्तिरीय उपनिषद् का आदेश, "सत्यं वद। धर्मं चर।" आज की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में भी ज्ञान के साथ मूल्य–बोध, कौशल और नागरिक जिम्मेदारी पर बल दिया गया है। शिक्षा केवल रोजगार का साधन न होकर जागरूक, संवेदनशील और उत्तरदायी नागरिक बनाने का माध्यम बने, यह विचार भारतीय परंपरा से पूरी तरह मेल खाता है।

पर्यावरण चेतना भारतीय नागरिक दृष्टि का अभिन्न अंग है। अथर्ववेद का कथन, "माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः।" आज जलवायु परिवर्तन, जैव–विविधता ह्रास और प्रदूषण की वैश्विक चुनौतियों के संदर्भ में अत्यंत प्रासंगिक है। आधुनिक नागरिकता में पर्यावरण संरक्षण, ऊर्जा–संरक्षण और सतत जीवन–शैली अनिवार्य नागरिक कर्तव्य बन चुके हैं। भारतीय ज्ञान परंपरा प्रकृति के साथ सहअस्तित्व का जो संदेश देती है, वही आज की वैश्विक आवश्यकता है।

भारतीय सभ्यता में संवाद, सभा और सहभागिता की परंपरा रही है। यह परंपरा आधुनिक लोकतंत्र में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, बहस और असहमति के सम्मान के रूप में विकसित हुई है। आज जब समाज में ध्रुवीकरण और असहिष्णुता की चुनौतियां हैं, तब भारतीय ज्ञान परंपरा का 'समन्वय' और 'सह–अस्तित्व' का भाव नागरिक चेतना को संतुलन प्रदान करता है।

आधुनिक भारतीय विद्वानों ने भी इस परंपरा को समकालीन संदर्भों से जोड़ा। डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने शिक्षा को आत्मा का प्रशिक्षण बताया और चेताया कि नैतिकता–विहीन शिक्षा नागरिक को अधूरा बना देती है। डॉ. ए. पी.जे. अब्दुल कलाम ने मूल्य–आधारित नागरिकता को महान राष्ट्र की पहचान कहा और विज्ञान तथा आध्यात्म के समन्वय को भारत की वैश्विक भूमिका का आधार माना। आचार्य विनोबा भावे का "जय जगत" का संदेश 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना को वैश्विक नागरिक चेतना से जोड़ता है। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना अंतरराष्ट्रीय सहयोग, शांति और मानवता के विचार को बल देती है। वैश्विक संकट, वो चाहे महामारी हो, पर्यावरण हो या मानवीय संघर्ष, इन सभी में भारतीय दृष्टि समाधान और सहानुभूति का मार्ग दिखाती है।

इस प्रकार भारतीय ज्ञान परंपरा और आधुनिक नागरिक जीवन परस्पर एक–दूसरे के पूरक हैं। संविधान, तकनीक और आधुनिक शासन नागरिकता को संरचना देते हैं, जबकि भारतीय ज्ञान परंपरा उसे नैतिक आत्मा प्रदान करती है। जब प्राचीन ज्ञान, जीवन दर्शन और आधुनिक नागरिक चेतना का संतुलित समन्वय होता है, तब नागरिक केवल अधिकार–सचेत नहीं, बल्कि कर्तव्यनिष्ठ, संवेदनशील और राष्ट्रनिर्माण में सहभागी बनता है। यही समन्वय भारत को न केवल एक सशक्त लोकतंत्र, बल्कि नैतिक नेतृत्व करने वाला राष्ट्र बनाता है। ■

वेदों के आलोक में भारतीय ग्रंथों एवं संविधान की भाषा में नागरिक कर्त्तव्य

डॉ. प्रवीण सत्येन्द्र विद्यालंकार
लेखिका व साहित्यकार, वैदिक दर्शन विशेषज्ञ एवं सामाजिक कार्यकर्त्री

वैदिक चिंतन परंपरा में नागरिक कर्त्तव्य कोई नवीन अवधारणा नहीं है। नागरिक कर्त्तव्य वेदों में अनुशासन की मूल चेतना से उपजा है, जहां व्यक्ति समाज एवं राष्ट्र को एक अविभाज्य इकाई के रूप में देखा गया है।

वेदों से लेकर उपनिषद्, भगवदगीता, भर्तृहरि के शतक, समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण और अंततः भारतीय संविधान–सभी में नागरिक कर्त्तव्य का भाव नैतिक अनुशासन, सामाजिक उत्तरदायित्व और राष्ट्र के प्रति निष्ठा के रूप में निरंतर प्रवाहित होता है।

वेदों में नागरिक कर्त्तव्य का मूल स्रोत-वेदों में समाज को ऋत अर्थात् नैतिक और प्राकृतिक व्यवस्था के रूप में समझा गया है। यहां व्यक्ति मात्र अधिकार भोगी ही नहीं बल्कि व्यवस्था का वाहक माना गया है।

वेदों में आत्म नियंत्रण करते हुए स्वतंत्रता को स्वीकार करना नागरिक कर्त्तव्य माना गया है। स्वामी विवेकानन्द जी ने जयघोष किया कि ''वेद सभी धर्मों के मूल हैं''। महर्षि दयानन्द जी ने उद्घोष किया कि ''वेदों की ओर लौटो''। क्योंकि महर्षि दयानन्द सरस्वती ने ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका में पञ्चमहायज्ञ की चर्चा करते हुए ब्रह्म यज्ञ एवं देवयज्ञ में –

''ओ३म् वाक्–वाक्

''ओ३म् प्राणः – प्राणः

''ओ३म् चक्षुः– चक्षुः आदि

तथा

''ओ३म् वाड़्म् ऽ आस्ये अस्तु'' आदि मंत्रों की जब व्याख्या करते हैं तो ये सभी नैतिक अनुशासन के भाग हैं, वैदिक आत्म अनुशासन की अभिव्यक्ति हैं। वेदों में सामाजिक नियमों, संयम एवं समर्पण को अपनाना नागरिक कर्त्तव्य की आत्मा माना गया है।

वेदों में यज्ञ भी नैतिक कर्त्तव्य का भाग :वेदों में यज्ञ को मात्र कर्मकाण्ड–परक न मानकर परिवार, समाज एवं राष्ट्रहित में निजी स्वार्थ का त्याग और सार्वजनिक हित में कर्म करना ही नागरिक कर्त्तव्य है। इसे सरल शब्दों में कहा जाए तो वेदों में नैतिक अनुशासन/आत्म नियंत्रण आधुनिक नागरिक कर्त्तव्य वाक् संयम जिम्मेदार अभिव्यक्ति (स्वतंत्रता किन्तु स्वच्छंदता नहीं) प्राण अनुशासनस्वस्थ जीवन शैली, नशा आदि दुर्व्यसनों से मुक्त जीवन। देव यज्ञ सामाजिक एवं राष्ट्रहित उत्तरदायित्व ब्रह्मयज्ञ सांविधानिक बोध एवं नियमों का पालन।

वेदों के मूल से उपजे डॉ. भीमराव अम्बेडकर के नागरिक कर्त्तव्य : डॉ. अम्बेडकर साहब का स्पष्ट मत था –"अधिकार तभी टिकते हैं, जब नागरिक नैतिक रूप से उत्तरदायी हों"।

डॉ. अम्बेडकर जी ने वेदों को सीधे संविधान का स्रोत नहीं माना किन्तु, उद्देशिका मूल अधिकार एवं मूल कर्त्तव्य आदि में निहित नैतिक मूल्यों अर्थात् अनुशासन, कर्त्तव्य–बोध और सामाजिक

उत्तरदायित्व को आधुनिक संविधान में समानता, गरिमा, बंधुत्व, एकता अखण्डता के रूप में रूपांतरित करना यह वेदों से ही लिया है।

मैं कहना चाहूँगी कि अम्बेडकर जी ने वेदों को अस्वीकार नहीं किया, बल्कि उन्हें व्यक्ति की गरिमा के अनुरूप सांविधानिक नैतिकता में रूपांतरित किया है।

उपनिषद - आंतरिक कर्त्तव्य बोध : उपनिषद नागरिक कर्त्तव्य को बाहरी दण्ड या भय से नहीं बल्कि आत्मिक अनुशासन से जोड़ते हैं।

तैतिरीय उपनिषद का निर्देश है-

''सत्यं वद धर्मं चर''

अर्थात् सत्य आचरण करते हुए सदाचार, संयम, सद्गुण रूपी मानवीय धर्म को धारण करो। यही एक आदर्श नागरिक जीवन की आधारशिला है।

उपनिषद का कहना है कि व्यक्ति का आचरण ही समाज की दिशा तय करता है।

भगवद् गीता - निष्काम कर्म-

श्रीमद् भगवद्गीता का निष्काम कर्म नागरिक कर्त्तव्य को दार्शनिक ऊँचाई प्रदान करता है।

'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन'' का सिद्धांत व्यक्ति को अधिकार-केन्द्रित नहीं बल्कि कर्त्तव्य केन्द्रित बनाता है।

गीता का यह लोक संग्रह सिद्धांत नागरिक कर्त्तव्यों को निष्काम भाव (अर्थात् फल की इच्छा किए बिना हमें सामाजिक दायित्व बोध के साथ कर्म करना) से करने की प्रेरणा देता है, जिससे सामाजिक समरसता व राष्ट्रीय एकता सम्भव हो सके।

महाराजा भर्तृहरि के वैराग्य शतक का कर्त्तव्य सिद्धांत- भर्तृहरि के वैराग्य का अर्थ संसार से अलग होना नहीं बल्कि आसक्ति त्याग के साथ कर्त्तव्य का पालन करना है।

'कुरू पुण्यमहोरात्रं स्मर नित्यमनित्यताम्' अर्थात् ध्यान के साथ-साथ दिन-रात अपने कर्त्तव्यों का भी पालन करो, यही सामाजिक स्थिरता का आधार है।

समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में कर्त्तव्य और सामाजिक संतुलन : समाजशास्त्र के अनुसार जब समाज में नियम, मूल्य और उत्तरदायित्व कमजोर पड़ते हैं, तब अनोमी (Normlessness) की स्थिति उत्पन्न होती है। समाजशास्त्र की दृष्टि में आज युवाओं में स्वतंत्रता को स्वच्छंदता समझने की प्रवृत्ति सामाजिक विघटन का दुष्परिणाम है।

समाजशास्त्र के शब्दों में स्वतंत्रता एवं नागरिक कर्त्तव्य आंतरिक सामाजिक नियंत्रण एवं सामाजिक नियमों का पालन करना है।

वेदों में यज्ञ को मात्र कर्मकाण्ड-परक न मानकर परिवार, समाज एवं राष्ट्रहित में निजी स्वार्थ का त्याग और सार्वजनिक हित में कर्म करना ही नागरिक कर्त्तव्य है। इसे सरल शब्दों में कहा जाए तो वेदों में नैतिक अनुशासन/आत्म नियंत्रण आधुनिक नागरिक कर्तव्य वाक् संयम जिम्मेदार अभिव्यक्ति (स्वतंत्रता किन्तु स्वच्छंदता नहीं) प्राण अनुशासनस्वस्थ जीवन शैली, नशा आदि दुर्व्यसनों से मुक्त जीवन। देव यज्ञ सामाजिक एवं राष्ट्रहित उत्तरदायित्व ब्रह्मयज्ञ सांविधानिक बोध एवं नियमों का पालन।

भारतीय संविधान : कर्त्तव्य और गरिमा का संतुलन -डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने स्पष्ट कहा था कि संविधान की सफलता नागरिकों के आचरण पर निर्भर करती है।

जहां एक ओर भारतीय संविधान में मूल अधिकार (Fundamental Rights) भाग-III, अनु0 12-35 तक दिए गए हैं, वहीं दूसरी ओर व्यक्ति स्वतंत्रता को स्वच्छंदता न समझ इसके लिए अनु0 51 (A) (Fundamental Duties) को भी अपनाने की चर्चा है। जिसके अंतर्गत राष्ट्रीय एकता अखण्डता की रक्षा, सामाजिक सद्भाव और सार्वजनिक सम्पत्ति की सुरक्षा की बात कही गई है और यही नागरिक कर्त्तव्य है। इसे ही भारतीय ग्रंथों ने आत्म अनुशासन एवं नैतिक परम्परा माना है।

युवा और नागरिक कर्त्तव्य : संयुक्त राष्ट्र (UN) की रिपोर्टो और भारतीय जनगना (Indian Census) के आंकडों के अनुसार भारत सर्वाधिक युवाओं का देश है। आज का युवा भारत की सबसे बड़ी शक्ति है। किंतु युवाओं में एक वैचारिक भ्रम की स्थिति है, स्वतंत्रता और स्वच्छंदता में भेद न कर पाना। अंततः मैं निष्कर्ष स्वरूप राष्ट्र के सभी युवाओं से शंखनाद करती हूं कि वेदों के आलोक में भारतीय ग्रंथों में नागरिक कर्त्तव्य आत्मबोध का निमंत्रण है।

अतः हम युवा नागरिक कर्त्तव्य का पुनर्जागरण करें, ताकि हम दुर्बल घास के तिनकों की तरह न बनें, जिसे कोई भी आंधी उड़ा ले जाए, हमें तो वट वृक्ष की तरह बनना है, जिसे कोई भी तूफ़ान तोड़ न सके, हिला न सके।

यही नागरिक कर्त्तव्य सशक्त गणतंत्र की सच्ची पहचान है। ■

ISSN No. 2581-3528

मीडिया विमर्श और जिम्मेदार नागरिक

डॉ. दीपा रानी
सहायक प्रोफेसर, दिल्ली विश्वविद्यालय

भारत में मीडिया को लोकतंत्र के चौथे स्तंभ के रूप देखा जाता है, जहां उसकी जिम्मेदारी खबरों के आदान प्रदान तक मात्र सीमित नहीं हैं अपितु सामाजिक दायित्वों को लेकर भी इसकी भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है, क्योंकि भारत एक प्रगतिशील देश है जहां लोग सामाजिक व आर्थिक रूप से संघर्षरत है। देश की बड़ी आबादी आज भी गरीबी रेखा के नीचे अपना जीवन यापन कर रहीं है। देश महंगाई, प्रदूषण, भ्रष्टाचार, बेरोजगारी जैसे अनेकों समस्याओं से आज भी उबर नहीं पाया है। आज डिजिटल युग में भी देश में साइबर क्राइम और डिजिटल करप्शन एक बड़ी समस्या बना हुआ है। ऐसी स्थिति में देश की मीडिया के साथ, नागरिकों का कर्त्तव्य भी महत्वपूर्ण हो जाता है। समाज के प्रति उसे और अधिक संवेदनशील होने की आवश्यकता है, तभी हम चौमुखी विकास की दर को तीव्र गति से बढ़ा पाएंगे एवं राष्ट्र को सशक्त एवं समृद्ध बनाने में सफल हो पाएंगे।

भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में नागरिक कर्त्तव्यों का अवलोकन करना भी आवश्यक है, क्योंकि इस देश के विकास में भारतवासियों को अन्य देशों की अपेक्षा अधिक स्वायत्त प्राप्त है। भारत के संविधान में आर्टिकल 19 (1) (a) के तहत भारत के प्रत्येक नागरिक को अभिव्यक्ति की स्वंत्रता प्रदान की गई है जिसके द्वारा भारतवासियों को सूचना के आदान प्रदान का पूर्ण अधिकार प्राप्त है। वो ना केवल सूचना प्राप्त करने का अधिकार रखते हैं बल्कि स्वयं सूचना आदान–प्रदान करने के लिए भी उतने ही स्वतंत्र हैं। ऐसी स्थिति में जहां मीडिया व आम जनमानस के पास बराबरी का अधिकार प्राप्त है, वहां नागरिक कर्त्तव्यों के महत्व का अवलोकन करना अति आवश्यक है।

पिछले कई दशकों में ऐसे कई उदाहरण देखने को मिले हैं जहां आम लोगों ने अपने निजी पहल से बड़े सामाजिक बदलाव लाने के प्रयास किये हैं । देश के सर्वोच्च नागरिक सम्मान की सूची को अगर टटोला जाये तो हमें कई ऐसे नाम मिलेंगे जो ना केवल छोटे स्तर पर अपितु राष्ट्रीय स्तर पर बदलाव लाने में सफल हुए हैं। मीडिया के माध्यम से हमें अक्सर कई ऐसे उदाहरण देखने और सुनने को मिलते हैं। लेकिन अगर

उनका आंकलन किया जाय तो ऐसे लोगों की संख्या बहुत कम है। ऐसी स्थिति में मीडिया की भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है, क्योंकि वह लोगों में समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारियों के लिए उन्हें सचेत करने और सलाह देने की क्षमता रखता है। मीडिया अपने सामाजिक दायित्वों का पालन करते हुए समाज को जागरूक करता है और साथ ही अहसास दिलाता है कि देश की समस्याएं कितनी गंभीर हैं और इसे हल करना कितना आवश्यक है। यह बिना नागरिक सहयोग के असंभव है।

इंटरनेट के बढ़ते वैश्विक विस्तार और मीडिया के माध्यम से आज के डिजिटल युग में कई ऐसे प्लेटफार्म मौजूद कराए जाते है जहां आम लोगों को अपने विचारों को समाज के सामने व्यक्त करने का महत्वपूर्ण अवसर प्राप्त होता है। देश के कई ऐसे प्रतिष्ठित समाचार पत्रों के माध्यम से ऐसी कई मुहिम चलायी जा रहीं हैं जहां आम लोगों के सफल प्रयासों के माध्यम से समाज में जागरूकता लाई जा रहीं है। दैनिक जागरण समाचारपत्र की अनोखी मुहिम 'सात सरोकार' के तहत कई ऐसी कई खबरों को प्रकाश में लाया गया जहां सात अलग विषयों में सामाजिक पहल को दर्शाया गया। यह मुहिम सुशिक्षित समाज, नारी सशक्तिकरण, गरीबी उन्मूलन, जल संरक्षण, पर्यावरण संरक्षण, स्वस्थ समाज और जनसंख्या नियोजन जैसे विषयों पर केंद्रित थे तथा इन विषयों पर आधारित नागरिक प्रयासों को अनेकों कहानियों के माध्यम से दर्शाया गया। इसी प्रकार आम लोगों में स्व के भाव को मजबूत करने के उद्देश्य से अमर उजाला अखबार ने भी एक अनोखी मुहिम शुरू की जिसका नाम था 'मंजिले और भी है'। इस मुहिम के तहत ऐसी कहानियों को समाज के समकक्ष लाया जाता था जो कि आम लोगो की अनदेखी पहल हुआ करती थीं। ऐसी पहलें जो बड़े बदलाव का सूचक बनीं। साप्ताहिक पत्रिका 'ऑर्गनाइजर' ने एक दशक तक अपनी पहल 'द ट्रेंडसेटर' के माध्यम से समाज के ऐसे नायकों को प्रकाश में लाने का प्रयास किया जिन्होंने अपने निजी प्रयासों से समाज में अलग पहचान बनाई। ऐसे नायक जिन्होंने सामाजिक बदलाव के लिए अपना सब कुछ समर्पित किया और अपने प्रयासों में कामयाब भी हुए। इसी प्रकार पब्लिक ब्रॉडकास्ट दूरदर्शन एवं संसद टीवी आज भी अपने कई ऐसे कार्यक्रमों के माध्यम से सामाजिक बदलाव में लोगों की भागीदारी को दर्शाते है जोकि बहुत प्रेरणादायी होते है। कोविड महामारी के दौरान मीडिया आउटलेट्स ने नागरिकों के अद्भुत और सराहनीय प्रयासों पर अपनी पूर्ण प्रस्तुति दिखाई ताकि आम जनमानस नकारात्मक खबरों के भय से उबर सके। खबरों में सकारात्मकता को बनाये रखने के लिए दैनिक भास्कर समाचारपत्र की अनोखी पहल 'नो नेगेटिव मंडे' (No Negative Monday) द्वारा केवल सकारात्मक खबरों को अखबार के प्रथम पृष्ठ पर प्रकाशित किया जाता था। देश के प्रतिष्ठित न्यूज़ चैनल आजतक ने 'गुड न्यूज़ टुडे' (GNT) नामक एक सिस्टर चैनल की शुरुआत की ताकि सकारात्मकता को अधिक अधिकांश मात्रा में समाज में प्रसारित और प्रचारित किया जा सके। नागरिक कर्त्तव्यों को दर्शाते मीडिया के ये अनोखे प्रयास अधिक सराहनीय साबित हुए जिससे ना केवल जागरूकता लाना संभव हो पाया बल्कि समाज को एक नई दिशा भी प्राप्त हो रही है।

पिछले कई दशकों में ऐसे कई उदाहरण देखने को मिले हैं जहां आम लोगों ने अपने निजी पहल से बड़े सामाजिक बदलाव लाने के प्रयास किये हैं। देश के सर्वोच्च नागरिक सम्मान की सूची को अगर टटोला जाये तो हमें कई ऐसे नाम मिलेंगे जो ना केवल छोटे स्तर पर अपितु राष्ट्रीय स्तर पर बदलाव लाने में सफल हुए हैं। मीडिया के माध्यम से हमें अक्सर कई ऐसे उदाहरण देखने और सुनने को मिलते हैं।

इस प्रकार मीडिया के माध्यम से जिम्मेदार नागरिकों के अनोखे प्रयासों से समाज न केवल जागरूकता की ओर अग्रसर हो रहा है बल्कि आम लोगो को भी एक नई दिशा मिल रही है। देश के प्रत्येक नागरिक को अपने दायित्वों का निर्वहन करते हुए देश की उन्नति में अपना सशक्त योगदान देना चाहिए साथ ही मीडिया के साथ भागीदारी करके संवाद और विमर्श के माध्यम से समाज को जागरूक करने में भी अपना प्रबल योगदान देना चाहिए ताकि सही और गलत को निष्पक्षता के साथ आंकलन कर देश को उन्नति की ओर अग्रसर किया जा सके। ■

ISSN No. 2581-3528

वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भारतीय नागरिक

डॉ. अंकित पांडेय
कम्यूनिकेशन एक्सपर्ट एवं वरिष्ठ पत्रकार

21वीं सदी में भारत अभूतपूर्व वैश्विक परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है, जहां वह एक उभरती आर्थिक महाशक्ति, तकनीकी नवाचार का केंद्र, जिम्मेदार लोकतांत्रिक शक्ति और 'ग्लोबल साउथ' की प्रभावशाली आवाज़ के रूप में सामने आ रहा है। इस बदलते अंतरराष्ट्रीय परिदृश्य में भारत की विदेश नीति, आर्थिक क्षमताएं, सैन्य शक्ति और कूटनीतिक सक्रियता जितनी महत्वपूर्ण हैं, उतनी ही निर्णायक भूमिका आम भारतीय नागरिक के व्यवहार, सोच और आचरण की भी है। वैश्वीकरण, सूचना क्रांति, अंतरराष्ट्रीय यात्रा, प्रवासी भारतीय समुदाय, सोशल मीडिया और सांस्कृतिक आदान–प्रदान ने नागरिक को केवल 'देश का निवासी' भर नहीं रहने दिया, बल्कि उसे अपने राष्ट्र की जीवंत छवि, मूल्यों और चरित्र का प्रत्यक्ष दूत बना दिया है।

वैश्विक भारत और नागरिक की भूमिका : 21वीं सदी में भारत को एक ऐसे राष्ट्र के रूप में देखा जा रहा है जो न केवल तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्था है, बल्कि लोकतांत्रिक मूल्यों, विविधतापूर्ण संस्कृति और जिम्मेदार वैश्विक नेतृत्व की संभावनाओं से भी परिपूर्ण है। भारत की जी–20 अध्यक्षता, 'वॉइस ऑफ ग्लोबल साउथ' जैसे प्रयास, क्वाड, ब्रिक्स, अफ्रीका व लैटिन अमेरिकी देशों के साथ बढ़ती साझेदारियां, डिजिटल पब्लिक इन्फ्रास्ट्रक्चर, सस्ती वैक्सीन और अंतरराष्ट्रीय आपदा–सहायता जैसे कदमों ने उसे वैश्विक विमर्श के केंद्र में ला खड़ा किया है। इस परिदृश्य में नागरिक आचरण भारत की छवि का प्रत्यक्ष दूत बन गया है। अंतरराष्ट्रीय यात्रा में भारतीयों की बढ़ती उपस्थिति, विश्वविद्यालयों में भारतीय छात्रों की संख्या, बहुराष्ट्रीय कंपनियों में भारतीय पेशेवरों की अग्रिम भूमिका, स्टार्टअप इकोसिस्टम में भारतीय नवप्रवर्तकों की पहचान, और डिजिटल प्लेटफॉर्म पर भारतीयों की व्यापक सक्रियता ने यह स्थिति बना दी है कि अब किसी एक नागरिक का व्यवहार भी पूरे राष्ट्र के चरित्र का प्रतीक मान लिया जाता

भारत की वैश्विक छवि - ऐतिहासिक से समकालीन संदर्भ : प्राचीन काल में भारत की पहचान ज्ञान, आध्यात्मिकता, व्यापारिक नैतिकता और बौद्धिक परंपरा के अद्वितीय संगम के रूप में निर्मित हुई। नालंदा और तक्षशिला जैसे विश्वविद्यालय, वेद उपनिषदों से लेकर बौद्ध जैन दर्शन तक का वैचारिक वैभव, आयुर्वेद और योग की जीवन दृष्टि, और सिल्क रूट के माध्यम से पूर्व पश्चिम के बीच हुए व्यापारिक आदान प्रदान ने भारत को एक ऐसे "सिविलाइजेशनल स्टेट" के रूप में स्थापित किया जो केवल भौगोलिक इकाई नहीं बल्कि एक विशिष्ट सभ्यतागत अनुभव था। यह वही विरासत है जो आज पुनः "भारत की सभ्यतागत चेतना" और "सॉफ्ट पावर" की चर्चा के साथ वैश्विक विमर्श में उभर रही है।

सॉफ्ट पावर और नागरिक आचरण : सॉफ्ट पावर उस क्षमता का नाम है जिससे कोई देश बिना दबाव या बल प्रयोग के, अपनी संस्कृति, विचारों, मूल्यों और जीवन शैली के आकर्षण के माध्यम से अन्य समाजों को प्रभावित करता है। अक्सर सॉफ्ट पावर को केवल सरकारी सांस्कृतिक केंद्रों, बड़े–बड़े उत्सवों, फिल्म उद्योग या राजनयिक अभियानों से जोड़ा जाता है, पर वास्तव में इसकी जड़ नागरिक समाज और सामान्य नागरिक के दैनिक आचरण में होती है। साधारण भारतीय नागरिक की भाषा शैली, आतिथ्य भाव, परिवार केंद्रित जीवन दृष्टि, बुजुर्गों के सम्मान की परंपरा, विविधता के प्रति सहिष्णुता, योग और ध्यान की लोकप्रियता, भारतीय भोजन और वस्त्रों के प्रति आकर्षण, और त्योहारों में सामूहिकता की भावना दुनिया के सामने भारत की सॉफ्ट पावर को मानवीय चेहरे के साथ प्रस्तुत करती है।

प्रवासी भारतीय-विश्व मंच पर 'ब्रांड एंबेसडर' : आज लगभग हर महाद्वीप में

भारतीय मूल के समुदाय बसे हुए हैं, जिनकी संख्या करोड़ों में है। ये प्रवासी भारतीय केवल आर्थिक रूप से ही नहीं, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक स्तर पर भी भारत की प्रतिष्ठा बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। डॉक्टर, इंजीनियर, वैज्ञानिक, प्रोफेसर, सीईओ, पॉलिसी मेकर, उद्यमी, कलाकार, राजनेता और प्रशासक के रूप में भारतीय मूल के लोगों की सफलता ने भारत की छवि को प्रतिभा समृद्ध, मेहनती और विश्वसनीय राष्ट्र के रूप में स्थापित किया है। जब किसी बहुराष्ट्रीय कंपनी का प्रमुख, किसी वैश्विक टेक कंपनी का नेतृत्व, किसी अंतरराष्ट्रीय संस्थान का निर्णय निर्माता या किसी विकसित देश की संसद का सदस्य भारतीय मूल का होता है, तो दुनिया भारत को "ब्रेन ड्रेन" नहीं बल्कि "ब्रेन गेन" की संभावनाओं वाला देश मानती है।

पर्यटन, आतिथ्य और अतिथि सेवा में नागरिक भूमिका : "अतिथि देवो भव" भारतीय संस्कृति का पुरातन आदर्श है, पर वैश्विक दौर में इसकी परीक्षा रोजमर्रा के व्यवहार में होती है। भारत आने वाले पर्यटकों के लिए टैक्सी ड्राइवर, गाइड, दुकानदार, होटल कर्मी, पुलिसकर्मी और स्थानीय निवासी ही पहला भारतीय चेहरा होते हैं। उनका व्यवहार ही 'इनक्रेडिबल इंडिया' जैसे अभियानों की वास्तविक प्रामाणिकता तय करता है। जब किसी विदेशी पर्यटक के साथ ईमानदारी, उचित मूल्य, शालीन भाषा, साफ-सफाई, भरोसेमंद मार्गदर्शन और सुरक्षा भावना का अनुभव होता है, तो वह केवल एक यात्रा नहीं, बल्कि एक सकारात्मक स्मृति लेकर लौटता है।

नागरिक कूटनीति : आज की दुनिया में विदेशी नीति और कूटनीति केवल दूतावासों, राजनयिकों और उच्चस्तरीय सम्मेलनों तक सीमित नहीं रही। अब छात्र अदला बदली कार्यक्रम, शोध सहयोग, कलाकार दौरे, खेल प्रतियोगिताएं, धार्मिक और आध्यात्मिक यात्राएं, एनजीओ नेटवर्क और नागरिक समूह भी देशों के बीच पुल का काम कर रहे हैं।

भारतीय सांस्कृतिक कूटनीति और नागरिक : भारतीय संस्कृति की मूल पहचान बहुलता, सहिष्णुता, विविधता, आध्यात्मिकता और उत्सवधर्मिता है। योग दिवस, गीता जयंती, दीपावली, होली, ईद, गुरुपर्व, बुद्ध पूर्णिमा, पोंगल, बिहू, ओणम आदि त्योहारों के सामूहिक आयोजन में सामान्य नागरिकों की भागीदारी भारतीय बहुलतावाद को जीवंत करती है। जब विदेशों में भारतीय समुदाय इन पर्वों को स्थानीय संस्कृति के साथ मिलाकर मनाता है, तो न केवल भारतीय पहचान मजबूत होती है, बल्कि स्थानीय समाज में भारत के प्रति अपनत्व और जिज्ञासा भी बढ़ती है।

स्वच्छता, पर्यावरण और जल संरक्षण : वैश्विक छवि का नया मानक जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण, कार्बन फुटप्रिंट, प्लास्टिक कचरा और जल संकट आज दुनिया के साझा संकट हैं। ऐसे में नागरिक स्तर पर जिम्मेदार व्यवहार स्वच्छता, कचरे का सही निपटान, प्लास्टिक कमी, रिसाइकल, जल बचत, वृक्षारोपण, ऊर्जा संरक्षण भारत को जिम्मेदार पर्यावरणीय शक्ति के रूप में प्रस्तुत कर सकता है। स्वच्छ भारत अभियान, जल जीवन मिशन, मिशन लाइफ जैसी पहलों की सफलता केवल सरकारी योजनाओं पर नहीं, बल्कि आम नागरिकों की सक्रिय भागीदारी पर निर्भर है। यदि व्यवहार बदलता है, तो दुनिया भारत को समाधान उन्मुख समाज के रूप में देखती है, जो केवल अपनी समस्याओं की शिकायत नहीं करता, बल्कि वैश्विक संकटों के समाधान में योगदान देता है।

भारतीय नागरिक और वैश्विक नेतृत्व की विश्वसनीयता : जब भारत जलवायु न्याय, डिजिटल पब्लिक इन्फ्रास्ट्रक्चर, वैश्विक स्वास्थ्य, आपदा सहायता, शांति मिशन और विकासशील देशों के अधिकार जैसे मुद्दों पर वैश्विक नेतृत्व की बात करता है, तो अंतरराष्ट्रीय समुदाय केवल उसके भाषण नहीं, बल्कि उसके समाज और नागरिकों के आचरण को भी परखता है। यदि भारतीय नागरिक घरेलू और विदेशी दोनों मंचों पर कानून सम्मान, मानव गरिमा, लैंगिक बराबरी, बाल अधिकार, अल्पसंख्यक सम्मान और लोकतांत्रिक संस्थाओं के प्रति विश्वास के मूल्यों को जीते हैं, तो भारत का नैतिक नेतृत्व अधिक विश्वसनीय बनता है। इसके उलट यदि घरेलू स्तर पर हिंसा, असहिष्णुता, भ्रष्टाचार और भेदभाव का माहौल हो, तो वैश्विक मंच पर भारत के दावे कमजोर पड़ जाते हैं।

नागरिक आचरण ही 'न्यू इंडिया' की असली पहचान : आज जब भारत वैश्विक राजनीति, अर्थव्यवस्था, तकनीक, पर्यावरण और संस्कृति के केंद्र में उभर रहा है, तब प्रत्येक भारतीय नागरिक का व्यवहार देश की प्रतिष्ठा का वास्तविक मानक बन गया है। राज्य शक्ति, आर्थिक प्रगति और कूटनीतिक उपलब्धियां तभी स्थायी और सम्मानजनक होंगी, जब भारतीय नागरिक अपने दैनिक आचरण, डिजिटल उपस्थिति, वैश्विक सहभागिता और सामाजिक नैतिक जिम्मेदारियों के माध्यम से जिम्मेदार, सहिष्णु, सृजनात्मक और नैतिक भारतीयता को जीएं।

न्यू इंडिया का अर्थ केवल ऊंची इमारतें, हाई टेक प्रोजेक्ट, जीडीपी की तेज रफ्तार या अंतरिक्ष उपक्रमों की सफलता भर नहीं है; इसका सबसे महत्वपूर्ण आयाम वह जागरूक, संवेदनशील, अनुशासित और विश्व सचेत नागरिक है जो अपने भीतर बसे भारत को गरिमा, शालीनता और उत्तरदायित्व के साथ दुनिया के सामने प्रस्तुत करता है। यही नागरिक आधारित भारतीयता, 21वीं सदी के वैश्विक भारत की सबसे सशक्त, सुंदर और टिकाऊ पहचान बन सकती है। ■

कर्त्तव्य बोध की जीवंत प्रतिमा : स्वामी विवेकानंद

श्रेयांशी
शोध छात्रा, चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय (मेरठ)

भारतीय चिंतन परंपरा में कर्त्तव्यबोध वह दीपशिखा है, जो व्यक्ति के जीवन को अर्थ, दिशा और गरिमा प्रदान करती है। जब यह कर्त्तव्य चेतना किसी महापुरुष के जीवन में साकार हो उठती है, तब वह युगों तक मानवता का पथप्रदर्शन करती रहती है। स्वामी विवेकानंद ऐसे ही युगद्रष्टा संन्यासी थे, जिनके लिए कर्त्तव्य कोई सैद्धांतिक उपदेश नहीं, बल्कि जीवन का प्राणतत्व था। उनका व्यक्तित्व आत्मबल, सेवा, साहस और करुणा का ऐसा समन्वय है, जिसमें भारतीय आत्मा की संपूर्ण गरिमा झलकती है।

स्वामी विवेकानंद का व्यक्तित्व भारतीय चेतना का वह प्रखर शिखर है, जहां से कर्त्तव्यबोध केवल एक नैतिक उपदेश नहीं, बल्कि जीवन की सहज साधना में युगों युगों तक प्रवाहित होता है।

स्वामी जी मात्र एक संयासी या दार्शनिक नहीं थे, बल्कि राष्ट्र निर्माण के शिल्पकार, युवाओ के पथप्रदर्शक व मानवता के सजग प्रहरी थे। युगद्रष्टा, युगसृष्टा स्वामी जी ऐसे प्रेरक व्यक्तित्व थे, जिनके विचार मनुष्य को अपने अधिकारों की अपेक्षा अपने दायित्वों का बोध करते है। उनके लिए कर्त्तव्य कोई बोझ नहीं, बल्कि आत्मविकास और राष्ट्रोत्थान का माध्यम था। उन्होंने कहा था– "मनुष्य का जीवन केवल अपने लिए नहीं है; वह समाज, राष्ट्र और समस्त मानवता के लिए है।" यही भाव उनके संपूर्ण चिंतन और कर्म में प्रतिबिंबित होता है।

स्वामी विवेकानंद का जीवन स्वयं कर्त्तव्यबोध की जीवंत मिसाल है। युवा नरेंद्रनाथ दत्त के रूप में उन्होंने जिस सामाजिक, धार्मिक और बौद्धिक वातावरण में आँखें खोलीं, वह एक ओर पराधीनता की पीड़ा से ग्रस्त था, तो दूसरी ओर आत्मविश्वास की कमी से जूझ रहा था। ऐसे समय में रामकृष्ण परमहंस के सान्निध्य ने उन्हें यह बोध कराया कि आत्मज्ञान ही समस्त कर्त्तव्यों की आधारशिला है। वे मानते थे कि जो व्यक्ति स्वयं को पहचान लेता है, वही अपने कर्त्तव्यों को सही अर्थों में निभा सकता है। उनके शब्दों में, "जब तक तुम स्वयं पर विश्वास नहीं करते, तब तक ईश्वर पर विश्वास नहीं कर सकते।" यह कथन केवल आध्यात्मिक नहीं, बल्कि नैतिक और सामाजिक कर्त्तव्य का भी उद्घोष है।

स्वामी विवेकानंद ने कर्त्तव्य को संकीर्ण धार्मिक कर्मकांडों से मुक्त कर व्यापक मानवधर्म से जोड़ा। उनके लिए भूखे को भोजन देना, अशिक्षित को शिक्षा देना और दुर्बल को सशक्त बनाना, पूजा से बढ़कर था। उन्होंने स्पष्ट कहा– "दरिद्र

नारायण की सेवा ही सच्ची सेवा है।" यह कथन भारतीय समाज को एक नई दृष्टि देता है, जहां ईश्वर मंदिरों में नहीं, बल्कि पीड़ित मानवता में विराजमान है। इस विचार ने कर्त्तव्यबोध को भावुक करुणा से ऊपर उठाकर सक्रिय सेवा में रूपांतरित किया।

उनका कर्त्तव्यबोध केवल उपदेश तक सीमित नहीं था। शिकागो धर्म संसद में दिया गया उनका ऐतिहासिक भाषण भारतीय आत्मगौरव का घोष था। "मेरे अमेरिकी भाइयो और बहनो" कहकर उन्होंने जिस आत्मविश्वास से विश्व को संबोधित किया, वह उस राष्ट्र के कर्त्तव्यबोध का प्रतीक था, जो अपनी आध्यात्मिक जिम्मेदारी को पहचान चुका था। उन्होंने पश्चिम को यह संदेश दिया कि भारत केवल आध्यात्मिक ज्ञान का भंडार नहीं, बल्कि विश्व को मार्गदर्शन देने का नैतिक उत्तरदायित्व भी रखता है। यह राष्ट्रीय कर्त्तव्यबोध आज भी भारत की वैश्विक भूमिका को दिशा देता है।

स्वामी विवेकानंद युवाओं को विशेष रूप से कर्त्तव्य के लिए प्रेरित करते थे। वे कहते थे–"उठो, जागो और लक्ष्य प्राप्ति तक रुको मत।" यह वाक्य आलस्य, पलायन और निराशा के विरुद्ध एक शंखनाद है। उनके अनुसार युवा शक्ति यदि अपने कर्त्तव्य को पहचान ले, तो राष्ट्र का पुनर्निर्माण संभव है। वे शारीरिक, मानसिक और नैतिक बल को कर्त्तव्य की त्रिवेणी मानते थे। उनका विश्वास था कि निर्बल मनुष्य न तो अपना, न समाज का और न ही राष्ट्र का कर्त्तव्य निभा सकता है।

स्वामी विवेकानंद का कर्त्तव्यबोध व्यक्ति और समाज के संतुलन पर आधारित था। वे न तो व्यक्तिवाद के अंध समर्थक थे और न ही भीड़ में व्यक्ति को खो देने के पक्षधर। उनका मानना था कि व्यक्ति का सर्वोत्तम विकास तभी संभव है, जब वह समाज के प्रति अपने दायित्वों को समझे। उन्होंने कहा–"हम जो हैं, वह समाज की देन है; इसलिए समाज के प्रति हमारा ऋण कभी समाप्त नहीं हो सकता।" यह विचार आज के स्वार्थप्रधान युग में विशेष रूप से प्रासंगिक है।

उन्होंने शिक्षा को कर्त्तव्यबोध का सशक्त माध्यम माना। उनके अनुसार शिक्षा वह नहीं, जो केवल सूचनाएं दे, बल्कि वह है, जो चरित्र निर्माण करे। "शिक्षा वह है, जो मनुष्य के भीतर निहित पूर्णता को प्रकट करे" यह कथन शिक्षा के नैतिक उद्देश्य को रेखांकित करता है। ऐसे शिक्षित नागरिक ही अपने सामाजिक और राष्ट्रीय कर्त्तव्यों को समझ सकते हैं। स्वामी विवेकानंद की यह शिक्षा–दृष्टि आज भी शिक्षा–नीति के लिए प्रेरणा स्रोत है।

स्वामी विवेकानंद का कर्त्तव्यबोध साहस से जुड़ा हुआ था। वे भय को सबसे बड़ा पाप मानते थे। उनके अनुसार भयभीत व्यक्ति कभी अपने कर्त्तव्य का पालन नहीं कर सकता। उन्होंने कहा–"डरो मत, यह मेरा तुम्हें संदेश है।" यह संदेश केवल आध्यात्मिक निर्भयता नहीं, बल्कि सामाजिक और नैतिक साहस का भी आह्वान है। अन्याय के विरुद्ध खड़ा होना, सत्य के पक्ष में बोलना और कमजोर की रक्षा करना ये सभी कर्त्तव्य साहस के बिना अधूरे हैं।

उनकी दृष्टि में कर्त्तव्य और कर्मफल का संबंध भी अत्यंत स्पष्ट था। वे निष्काम कर्म के समर्थक थे। गीता की व्याख्या करते हुए उन्होंने बताया कि कर्त्तव्य का पालन फल की चिंता के बिना होना चाहिए। जब कर्म स्वार्थ से मुक्त होता है, तब वह साधना बन जाता है। यही कारण है कि उनका कर्त्तव्यबोध आत्मशुद्धि का मार्ग भी है और समाजसेवा का भी।

स्वामी विवेकानंद ने स्त्री सम्मान को भी कर्त्तव्य का अनिवार्य अंग माना। वे कहते थे कि जिस समाज में नारी का अपमान होता है, वह कभी उन्नति नहीं कर सकता। नारी शिक्षा और सशक्तिकरण को उन्होंने राष्ट्रीय कर्त्तव्य के रूप में देखा। यह विचार आज भी सामाजिक न्याय और समानता की आधारशिला है।

उनका संपूर्ण जीवन एक संदेश है कि कर्त्तव्य केवल शब्द नहीं, बल्कि सतत क्रिया है। अल्पायु में ही उन्होंने जिस व्यापक दृष्टि और अथक परिश्रम से भारत और विश्व को दिशा दी, वह इस बात का प्रमाण है कि कर्त्तव्यबोध यदि जाग्रत हो जाए, तो सीमाएं स्वतः टूट जाती हैं। उन्होंने स्वयं के लिए नहीं, बल्कि मानवता के लिए जिया।

आज के अधिकार–केंद्रित और स्वार्थ प्रधान युग में स्वामी विवेकानंद का कर्त्तव्यबोध एक सशक्त नैतिक मार्गदर्शन है। उनका जीवन हमें प्रेरित करता है कि हम अपने कर्त्तव्यों को पहचानें, निर्भय होकर उनका निर्वहन करें और सेवा को ही साधना मानें। यही कारण है कि स्वामी विवेकानंद आज भी कर्त्तव्यबोध की जीवंत प्रतिमा के रूप में हमारे सामने उपस्थित हैं।

आज के युग में, जब अधिकारों की चर्चा अधिक और कर्तव्यों की स्मृति कम होती जा रही है, स्वामी विवेकानंद का चिंतन हमें संतुलन सिखाता है। वे हमें याद दिलाते हैं कि सच्ची स्वतंत्रता कर्त्तव्यपालन से आती है, और सच्चा सुख सेवा में निहित है। उनका प्रेरक व्यक्तित्व आज भी यह संदेश देता है कि यदि प्रत्येक व्यक्ति अपने हिस्से का कर्त्तव्य ईमानदारी से निभाए, तो समाज स्वतः श्रेष्ठ बन जाएगा।

स्वामी विवेकानंद केवल एक संन्यासी या विचारक नहीं, बल्कि सर्वोत्तम कर्त्तव्यबोध की प्रेरणा देने वाले युगद्रष्टा थे। उनके विचार समय की सीमाओं से परे हैं और उनका जीवन एक ऐसा दीपक है, जो आज भी मानवता के लिए कर्त्तव्य, करुणा और साहस के पथ पर राह दिखाते हुए आलोकित करता हैं। ऐसे प्रेरक व्यक्तित्व के लिए शब्द सुमन अर्पित करते हुए बहुत गर्व की अनुभूति हो रही है ....

दीप्त हो उठी दिशाएं।
पाकर पुण्य प्रकाश तुम्हारा।।
लिखा जा चुका।
सुनहरे अक्षरों में इतिहास तुम्हारा।। ■

ISSN No. 2581-3528

मीडिया उपभोग और अभिव्यक्ति में नागरिक विवेक व उत्तरदायित्व

डॉ. अनुज सिंह
सहायक प्राध्यापक, आईआईएमटी
कॉलेज ऑफ मैनेजमेंट, ग्रेटर नोएडा

मानव प्रारंभ से ही अन्य जीवों से भिन्न रहा है। उसमें कुछ नया जानने और समझने की उत्कंठा अत्यंत आरंभिक काल से विद्यमान रही है। जानने की यह तीव्र इच्छा मानव की सबसे सशक्त प्रवृत्तियों में से एक है, जो उसे अन्य प्राणियों से अलग पहचान देती है। इसी विशेषता के कारण मानव न केवल अन्य जीवों और प्रकृति पर नियंत्रण स्थापित करने में सफल हुआ, बल्कि जहां पूर्ण नियंत्रण संभव नहीं हो सका, वहां उसने परिस्थितियों को अपने अनुकूल ढालने का प्रयास किया। ज्ञान की इस निरंतर खोज ने मानव को अपने अस्तित्व की रक्षा करते हुए विकास की लंबी यात्रा पर अग्रसर किया। आदिम मानव से लेकर आधुनिक सभ्यता तक का यह सफर उसी जिज्ञासा का परिणाम है। समय के साथ मानव ने न केवल स्वयं को बदला, बल्कि अपने चारों ओर ऐसी प्रणालियां विकसित कीं, जो उसकी सोच और निर्णय–प्रक्रिया में सहायक बन सकें। इसी क्रम में आज ऐसी मशीनें अस्तित्व में आ चुकी हैं, जो विश्लेषण करने, विकल्पों का मूल्यांकन करने और निर्णय तक पहुंचने में सक्षम हैं। इन प्रणालियों को मानव की कार्यशैली के अनुरूप तैयार किया जा रहा है, ताकि वे अनुभव से सीख सकें और जटिल परिस्थितियों में अधिक प्रभावी ढंग से कार्य कर सकें। यह समूची विकास–यात्रा मानव की उस मूल प्रवृत्ति को रेखांकित करती है, जिसने उसे केवल जीवित रहने तक सीमित नहीं रखा, बल्कि निरंतर आगे बढ़ने और नए क्षितिज तलाशने की प्रेरणा दी।

वर्तमान युग में फोन, लैपटॉप, मोबाइल और इंटरनेट जीवन के अनिवार्य अंग बन चुके हैं। इन उपकरणों के बिना आज के जीवन की कल्पना करना लगभग असंभव–सा प्रतीत होता है। सुबह आंख खुलते ही सूचनाओं की एक श्रृंखला सामने आ जाती है संदेश, अलर्ट और अपडेट लगातार ध्यान खींचते रहते हैं। यह सिलसिला दिन भर थमता नहीं। इस तेज रफ्तार सूचना प्रवाह का असर यह है कि पारंपरिक माध्यमों से मिलने वाली कई खबरें हमें सुबह ही पुरानी लगने लगती हैं। अनेक समाचारों को पढ़ने या देखने की उत्सुकता समाप्त हो जाती है। अखबारों की खबरें कई बार फीकी और दोहराव से भरी प्रतीत होती हैं। ऐसा महसूस होने लगता है मानो हम सूचनाओं की निरंतर बौछार के बीच खड़े हों। इस दौर में सूचनाओं की यह भरमार एक चुनौती बन चुकी है। हर ओर से आती जानकारियों के इस दबाव से स्वयं को अलग रखना या संतुलन बनाए रखना आसान नहीं रह गया है।

सोशल मीडिया पर हम प्रतिदिन अनेक प्रकार की जानकारियां साझा करते हैं। मोटे तौर पर इन जानकारियों को दो श्रेणियों में बांटा जा सकता है। पहली श्रेणी में उपयोगकर्ता से जुड़ी सूचनाएं आती हैं, जबकि दूसरी श्रेणी में वे जानकारियां शामिल होती हैं जो हमारे पास पहुंचती हैं, हमारे उपकरणों से होकर गुजरती हैं, या जिन पर हम अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं। सामान्य बोलचाल में इन सभी प्रकार की सूचनाओं को डेटा कहा जाता है। यदि इतिहास पर नजर डालें, तो एक समय था जब दुनिया की अधिकांश प्रतिस्पर्धा जीवाश्म ईंधनों को लेकर हुआ करती थी। पेट्रोल, डीजल और उनसे बनने वाले उत्पाद लंबे समय तक वैश्विक राजनीति और अर्थव्यवस्था के केंद्र में रहे। महंगाई, राष्ट्रों के बीच युद्ध, औद्योगिक और संरचनात्मक विकास, यहां तक कि कई देशों में सरकारों का बनना और गिरना इन सभी प्रक्रियाओं में तेल की भूमिका निर्णायक रही है। आज स्थिति बदल चुकी है। जिस स्थान पर कभी तेल हुआ करता था, वहां अब इंटरनेट और सूचनाएं आ खड़ी हुई हैं। वर्ष 2006 में क्लाइव हम्बी ने यह कहा था कि डेटा एक नए प्रकार का तेल है। यह कथन आज और अधिक प्रासंगिक प्रतीत होता है। वर्तमान समय में वैश्विक स्तर पर होने वाले अनेक परिवर्तन, टकराव और रणनीतियां इंटरनेट और सूचना के इर्द–गिर्द ही आकार ले रही हैं।

मीडिया उपभोग : सोशल मीडिया के व्यापक प्रचलन से पहले किसी समाचार को आम लोगों तक पहुंचाना एक कठिन और समय साध्य प्रक्रिया हुआ करती थी। उस दौर में जनसंचार मुख्यतः परंपरागत माध्यमों के जरिए होता था। इन माध्यमों पर कुछ सीमित लोगों का प्रभाव और नियंत्रण

रहता था। अखबार, रेडियो और टेलीविजन में ऊँचे पदों पर बैठे लोग ही यह तय करते थे कि जनता तक कौन–सी जानकारी पहुंचे और किसे नजरअंदाज किया जाए। सामान्य रूप से यह धारणा बनती है कि हम अपनी सुविधा और रुचि के अनुसार मीडिया का उपयोग करते हैं, लेकिन यह पूरा सत्य नहीं है। वास्तविकता यह भी है कि मीडिया में प्रस्तुत सामग्री हमारी सोच, दृष्टिकोण और निर्णय लेने की प्रक्रिया को गहराई से प्रभावित करती है। इस प्रकार मीडिया केवल सूचना का माध्यम नहीं रहता, बल्कि वह समाज की समझ और प्राथमिकताओं को भी आकार देता है। सोशल मीडिया के आने से पहले किसी बड़ी खबर को दबाना या किसी छोटी घटना को प्रमुख समाचार बना देना अपेक्षाकृत आसान था। कंटेंट पर कुछ गिने–चुने लोगों का आधिकारिक नियंत्रण होता था, जो उत्पादक और नियामक की भूमिका में रहते थे, जबकि पूरा देश उपभोक्ता मात्र था। उस समय भ्रामक सूचनाएं और झूठी खबरें आज की तरह व्यापक रूप से प्रभावी नहीं थीं।

वर्तमान युग में मीडिया उपभोग : वर्तमान युग को सोशल मीडिया का युग कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी। भारत सरकार के आंकड़ों पर दृष्टि डालें तो लगभग 491 मिलियन लोग सोशल मीडिया से जुड़े हुए हैं। यह संख्या अपने आप में अत्यंत विशाल है, इतनी तो कई देशों की कुल जनसंख्या भी नहीं होती। यह तथ्य सोशल मीडिया के बढ़ते प्रभाव और पहुंच को स्पष्ट रूप से रेखांकित करता है। जहां परंपरागत मीडिया में किसी भी सामग्री को प्रकाशित या प्रसारित करने का नियंत्रण कुछ सीमित हाथों में हुआ करता था और आम जनता केवल उपभोक्ता की भूमिका में रहती थी, वहीं सोशल मीडिया ने इस संरचना को पूरी तरह बदल दिया है। अब प्रत्येक व्यक्ति न केवल दर्शक है, बल्कि स्वयं सामग्री का सृजनकर्ता भी बन चुका है। कंटेंट की लोकप्रियता और लोगों की रुचि के आधार पर अनेक साधारण लोग सोशल मीडिया के माध्यम से देश और दुनिया में पहचान बना रहे हैं। सोशल मीडिया ने व्यक्ति को यह अवसर दिया है कि वह अपने माध्यम से यह देख सके कि उसके आसपास और समाज में क्या घट रहा है, और साथ ही अपनी बात, विचार और अनुभव भी दूसरों तक पहुंचा सके। इसने अभिव्यक्ति के नए रास्ते खोले हैं और संचार को अधिक सहभागी तथा व्यापक बना दिया है।

मीडिया उपभोग की बदलती संरचना : सोशल मीडिया के व्यापक विस्तार से पहले मीडिया उपभोग की संरचना अपेक्षाकृत सीमित और नियंत्रित थी। अख़बार, रेडियो और टेलीविज़न जैसे माध्यमों में संपादकीय जिम्मेदारी स्पष्ट थी। समाचारों के चयन, प्रस्तुति और सत्यापन की एक स्थापित प्रक्रिया हुआ करती थी। आम नागरिक उस समय मुख्यतः मीडिया का उपभोक्ता था।

आज भारत में करोड़ों लोग सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म से जुड़े हैं। यह केवल संचार का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक विमर्श, राजनीतिक संवाद और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का प्रमुख मंच बन चुका है। यहां व्यक्ति केवल दर्शक नहीं, बल्कि निर्माता और प्रसारक भी है।

ऐसे में नागरिक की भूमिका केवल सूचना ग्रहण करने तक सीमित नहीं रह जाती। अब वह यह भी तय करता है कि कौन–सी सूचना आगे जाएगी, किसे समर्थन मिलेगा और किसे नकारा जाएगा। यह शक्ति जितनी बड़ी है, उतना ही बड़ा उसका उत्तरदायित्व भी है।

भारतीय परंपरा में वाणी को अत्यंत महत्वपूर्ण माना गया है। कहा गया है कि वाणी से ही बंधन भी होता है और मुक्ति भी। आज डिजिटल युग में यह वाणी सोशल मीडिया पोस्ट, टिप्पणी और साझा की गई सामग्री के रूप में प्रकट होती है। यदि यह वाणी विवेकहीन हो जाए, तो वह समाज में वैमनस्य, भ्रम और अविश्वास को जन्म दे सकती है।

विवेकपूर्ण मीडिया व्यवहार की अनिवार्यता : आज आवश्यकता इस बात की है कि नागरिक मीडिया उपभोग करते समय केवल भावनाओं के प्रवाह में न बहें, बल्कि विवेक और तथ्य के आधार पर निर्णय लें। किसी भी सूचना को साझा करने से पहले उसके स्रोत, संदर्भ और प्रभाव पर विचार करना अनिवार्य है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता लोकतंत्र की आत्मा है, किंतु यह स्वतंत्रता उत्तरदायित्व से अलग नहीं हो सकती। समाज, राष्ट्र और संस्कृति पर पड़ने वाले प्रभावों को नजरअंदाज कर की गई अभिव्यक्ति अंततः स्वतंत्रता को ही कमजोर करती है।

राष्ट्रीय दृष्टि से देखें तो मीडिया व्यवहार भी राष्ट्र–निर्माण की प्रक्रिया का हिस्सा है। सजग, संतुलित और उत्तरदायी नागरिक ही एक स्वस्थ सूचना–परिस्थिति का निर्माण कर सकते हैं। यही वह आधार है जिस पर सामाजिक सौहार्द, राष्ट्रीय एकता और लोकतांत्रिक मूल्य टिके रहते हैं।

निष्कर्ष : मीडिया और तकनीक अपने आप में न तो सकारात्मक हैं और न नकारात्मक। उनका स्वरूप इस बात पर निर्भर करता है कि हम उनका उपयोग किस विवेक और किस उद्देश्य से करते हैं। आज के सूचना–प्रधान युग में सबसे बड़ी आवश्यकता तकनीकी दक्षता की नहीं, बल्कि नैतिक चेतना और नागरिक उत्तरदायित्व की है।

यदि हम मीडिया उपभोग और अभिव्यक्ति में संयम, सत्य और राष्ट्रहित को केंद्र में रखें, तो यही डिजिटल युग मानव विकास की अगली सकारात्मक छलांग सिद्ध हो सकता है। अन्यथा सूचना की यह शक्ति समाज को भ्रम और विभाजन की ओर भी ले जा सकती है। चुनाव हमारे विवेक के हाथ में है। ■

ISSN No. 2581-3528

स्वास्थ्य, स्वच्छता और नागरिक अनुशासन सामूहिक कर्त्तव्य की भारतीय दृष्टि

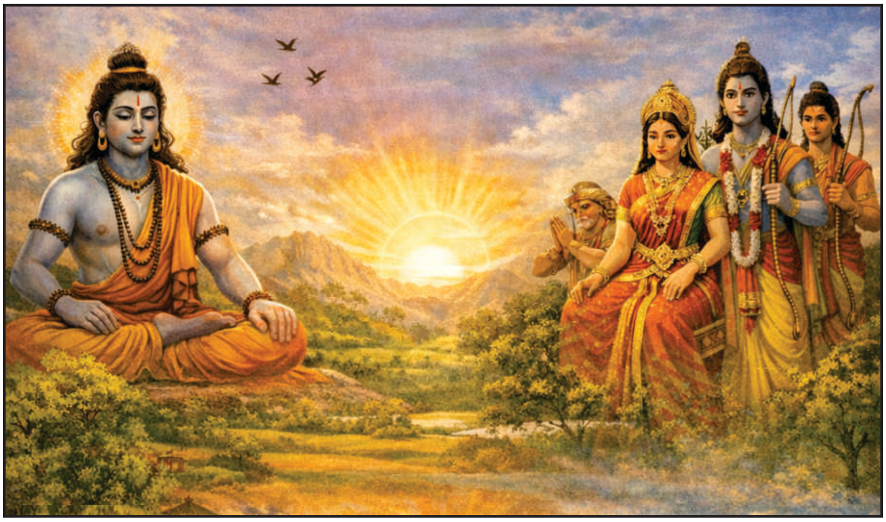

डॉ. रामशंकर
सहायक प्राध्यापक, आईआईएमटी कॉलेज ऑफ मैनेजमेंट, ग्रेटर नोएडा

स्वस्थ समाज की कल्पना केवल आर्थिक समृद्धि या तकनीकी प्रगति से पूरी नहीं होती, बल्कि उसका वास्तविक आधार स्वस्थ शरीर, स्वच्छ परिवेश और अनुशासित नागरिक जीवन में निहित होता है। भारतीय परंपरा में स्वास्थ्य को केवल रोगमुक्ति तक सीमित नहीं माना गया है, बल्कि उसे शारीरिक, मानसिक और नैतिक संतुलन के रूप में स्वीकार किया गया है। "शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्" का सूत्र हमें यह स्मरण कराता है कि धर्म, कर्त्तव्य और राष्ट्रसेवा सब कुछ स्वस्थ शरीर और स्वस्थ मन पर ही आधारित होता है। इसीलिए भारतीय सभ्यता में स्वास्थ्य, स्वच्छता और नागरिक अनुशासन को जीवन की नैतिक एवं आध्यात्मिक अनिवार्यताओं के रूप में स्वीकार किया गया है। हमारे प्राचीन ग्रंथ व्यक्ति के निजी आचरण से लेकर समाज और राज्य की व्यवस्था तक एक समग्र दृष्टि प्रदान करते हैं। आज के समय में, जब एक ओर स्वास्थ्य संकट, दूसरी ओर पर्यावरणीय असंतुलन और तीसरी ओर नागरिक अनुशासन की चुनौती हमारे सामने खड़ी है, तब यह दृष्टि और अधिक प्रासंगिक हो जाती है।

भारतीय दृष्टि में स्वास्थ्य का मूल आधार संतुलन है। श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण जीवनशैली के इसी संतुलन को योग और स्वास्थ्य का आधार बताते हैं। वे कहते हैं– "युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु। युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा" (अध्याय 6, श्लोक 17)। इसका आशय यह है कि जो व्यक्ति आहार, विहार, कर्म, निद्रा और जागरण सब में संतुलन रखता है, वही योगयुक्त होता है और वही दुःखों से मुक्त रहता है। यह श्लोक आधुनिक स्वास्थ्य विज्ञान में प्रचलित "लाइफस्टाइल बैलेंस" की संपूर्ण अवधारणा को अत्यंत सरल शब्दों में प्रस्तुत करता है। आज के समय में जब असंतुलित खानपान, अनियमित दिनचर्या और अत्यधिक तनाव से उत्पन्न रोग आम होते जा रहे हैं, तब गीता का यह संदेश एक व्यावहारिक मार्गदर्शन के रूप में सामने आता है।

गीता स्वास्थ्य और अनुशासन को आत्मानुशासन से जोड़ती है। भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं– "उद्धरेदात्मनाऽत्मानं नात्मानमवसादयेत्।"(अध्याय 6, श्लोक 5)। अर्थात मनुष्य को स्वयं अपने प्रयास से ही अपना उत्थान करना चाहिए और स्वयं को पतन की ओर नहीं ले जाना चाहिए। यही आत्मानुशासन आगे चलकर नागरिक अनुशासन का रूप लेता है। आज यातायात नियमों का पालन करना, सार्वजनिक स्थानों पर स्वच्छता बनाए रखना और स्वास्थ्य संबंधी निर्देशों का अनुसरण करना ये सभी इसी आत्मानुशासन के आधुनिक और व्यवहारिक उदाहरण हैं।

रामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदास सामाजिक जीवन के केंद्र में "परहित" को स्थापित करते हैं। वे कहते हैं– "परहित सरिस धरम नहि भाई।" (उत्तरकाण्ड, दोहा 38)। इसका अर्थ है कि परोपकार से बढ़कर कोई धर्म नहीं है। स्वास्थ्य और स्वच्छता का पालन केवल

ISSN No. 2581-3528

आत्मरक्षा का विषय नहीं है, बल्कि यह समाज के हित में किया गया कार्य है। यदि कोई व्यक्ति सार्वजनिक स्थानों पर गंदगी नहीं फैलाता, स्वच्छता बनाए रखता है या बीमारी की स्थिति में सावधानी बरतता है, तो वह समाज के प्रति अपने धर्म का पालन करता है। हाल के समय में महामारी के दौरान मास्क पहनना, दूरी बनाए रखना और टीकाकरण कराना परहित की इसी भावना के समकालीन उदाहरण हैं।

रामचरितमानस में शरीर, मन, वाणी और कर्म चारों की शुद्धता पर विशेष बल दिया गया है। तुलसीदास कहते हैं– "तनु मन बचन करम हितकारी।" (बालकाण्ड)। यह पंक्ति स्पष्ट करती है कि स्वास्थ्य केवल शारीरिक नहीं होता, बल्कि मानसिक और नैतिक भी होता है। आज मानसिक स्वास्थ्य को लेकर बढ़ती जागरूकता इस शिक्षा की समकालीन पुष्टि करती है, क्योंकि यह स्वीकार किया जाने लगा है कि स्वस्थ मन के बिना स्वस्थ शरीर की कल्पना अधूरी है।

भारतीय परंपरा में स्वच्छता का संबंध केवल बाह्य सफाई से नहीं, बल्कि आंतरिक निर्मलता से भी है। तुलसीदास कहते हैं– "निर्मल मन जन सो मोहि पावा।" (उत्तरकाण्ड, दोहा 45)। अर्थात निर्मल मन वाला ही ईश्वर को प्राप्त करता है। यह निर्मलता हमें यह सिखाती है कि स्वच्छता केवल कर्मकाण्ड या औपचारिकता नहीं, बल्कि एक संस्कार है। आज स्वच्छ भारत जैसे अभियानों की मूल भावना भी यही है कि स्वच्छता को आदत और जीवनमूल्य बनाया जाए, न कि केवल सरकारी कार्यक्रम के रूप में देखा जाए।

वाल्मीकि रामायण में श्रीराम का जीवन नागरिक अनुशासन और मर्यादा का सर्वोच्च आदर्श प्रस्तुत करता है। स्वयं श्रीराम को "मर्यादा पुरुषोत्तम" कहा गया है– "रामो विग्रहवान् धर्मः।" (अयोध्याकाण्ड, सर्ग 109)। इसका अर्थ है कि श्रीराम धर्म के साकार स्वरूप हैं। उनका जीवन यह शिक्षा देता है कि नियम, मर्यादा और अनुशासन का पालन कठिन परिस्थितियों में भी किया जाना चाहिए। वनवास जैसे कठिन काल में भी श्रीराम स्वच्छता, संयम और संतुलन का पालन करते हैं। यह आज के नागरिक जीवन के लिए भी एक प्रेरक आदर्श है कि परिस्थितियां चाहे जैसी हों, अनुशासन नहीं छोड़ा जाना चाहिए।

रामायण में रामराज्य का वर्णन एक ऐसे समाज के रूप में मिलता है जहां नागरिक स्वस्थ, सुखी और अनुशासित हैं– "नाधिव्याधिजराग्लानि दुःखं नापि दारिद्र्यजम्।" (उत्तरकाण्ड, सर्ग 128)। अर्थात रामराज्य में न रोग था, न मानसिक पीड़ा और न ही दरिद्रता। यह केवल काव्यात्मक कल्पना नहीं है, बल्कि यह संकेत करता है कि जब शासन, समाज और नागरिक अपने-अपने कर्त्तव्यों का ईमानदारी से पालन करते हैं, तो स्वास्थ्य और समृद्धि स्वाभाविक रूप से समाज में स्थापित हो जाती है।

श्रीमद्भगवद्गीता में समाज के प्रति उत्तरदायित्व को "लोकसंग्रह" कहा गया है–"लोकसंग्रहमेवापि सम्पश्यन्कर्तुमर्हसि।" (अध्याय 3, श्लोक 20)। अर्थात प्रत्येक कर्म समाज के हित को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। स्वास्थ्य, स्वच्छता और नागरिक अनुशासन तीनों ही लोकसंग्रह के अंग हैं। यदि कोई व्यक्ति केवल अपने लाभ के लिए प्रदूषण फैलाता है या नियमों का उल्लंघन करता है, तो वह लोकसंग्रह के सिद्धांत के विरुद्ध आचरण करता है।

समकालीन जीवन पर दृष्टि डालें तो शहरी क्षेत्रों में बढ़ता कचरा, प्रदूषण और यातायात अव्यवस्था नागरिक अनुशासन की कमी को स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं। गीता का कर्मयोग और रामायण की मर्यादा दोनों मिलकर यह सिखाते हैं कि इन समस्याओं का स्थायी समाधान केवल बाहरी दंड या कानून से नहीं, बल्कि आंतरिक चेतना और संस्कार से संभव है।

आधुनिक समय में स्वास्थ्य को प्रायः व्यक्तिगत जीवनशैली तक सीमित कर दिया गया है– जैसे खानपान, व्यायाम, नींद और योग। निस्संदेह ये सभी आवश्यक हैं, परंतु स्वास्थ्य की वास्तविक

परिभाषा तब पूर्ण होती है जब व्यक्ति अपने स्वास्थ्य के साथ–साथ समाज के स्वास्थ्य के प्रति भी संवेदनशील होता है। संक्रामक रोगों और महामारी के अनुभव ने यह स्पष्ट कर दिया है कि एक व्यक्ति की असावधानी पूरे समुदाय को प्रभावित कर सकती है। इसलिए स्वास्थ्य केवल "मेरा शरीर" नहीं, बल्कि "हमारा समाज" है।

भारतीय दृष्टि में स्वास्थ्य सेवा केवल सरकारी दायित्व नहीं है, बल्कि समाज की सामूहिक सहभागिता से जुड़ा विषय है। परिवार, मोहल्ला, विद्यालय और स्वयंसेवी संगठन सभी की भूमिका इसमें महत्वपूर्ण है। जब समाज स्वास्थ्य को सामूहिक दायित्व के रूप में स्वीकार करता है, तभी "स्वस्थ भारत" का स्वप्न साकार हो सकता है।

स्वच्छता भी इसी सामूहिक चेतना से जुड़ी हुई है। स्वच्छता का अर्थ केवल सड़क, नाली या घर की सफाई नहीं, बल्कि वह एक ऐसा संस्कार है जो व्यक्ति के आचरण, सोच और सार्वजनिक व्यवहार में झलकता है। आज गंदगी का मूल कारण संसाधनों की कमी से अधिक नागरिक चेतना की कमी है। सार्वजनिक स्थानों पर कचरा फैलाना, जल स्रोतों को प्रदूषित करना और सार्वजनिक सुविधाओं का दुरुपयोग ये सभी अनुशासनहीनता के उदाहरण हैं।

स्वच्छता अभियान तभी सफल हो सकते हैं जब प्रत्येक नागरिक यह समझे कि सार्वजनिक स्थान किसी 'दूसरे' का नहीं, बल्कि 'हम सबका' है। घर की सफाई के साथ–साथ सड़क, पार्क, कार्यालय और विद्यालय की स्वच्छता भी हमारी सामूहिक जिम्मेदारी है। स्वच्छ वातावरण रोगों की रोकथाम का सबसे सशक्त माध्यम है, इसलिए स्वच्छता को श्रम या औपचारिकता नहीं, बल्कि राष्ट्र निर्माण का आधार मानना होगा।

नागरिक अनुशासन किसी भी राष्ट्र की आत्मा होता है। अनुशासन का अर्थ दमन या भय नहीं, बल्कि स्वेच्छा से नियमों का पालन करना है। यातायात नियमों का पालन, सार्वजनिक संपत्ति की रक्षा, कतार में खड़ा होना और समय का सम्मान ये सभी छोटे–छोटे आचरण मिलकर राष्ट्र के चरित्र का निर्माण करते हैं। वास्तविक अनुशासन संस्कार से आता है, और वही स्वास्थ्य तथा स्वच्छता को स्थायी बनाता है।

भारतीय संस्कृति 'मैं' से 'हम' की यात्रा की संस्कृति है। जब व्यक्ति अपने आचरण को समाज के व्यापक हित से जोड़ता है, तभी स्वास्थ्य, स्वच्छता और अनुशासन प्रभावी बनते हैं। आज आवश्यकता इस बात की है कि हम इन मूल्यों को केवल नीतियों या अभियानों तक सीमित न रखें, बल्कि उन्हें अपने दैनिक जीवन का संस्कार बनाएं। स्वस्थ जीवनशैली और सार्वजनिक स्वच्छता को सामूहिक नागरिक कर्त्तव्य के रूप में अपनाकर ही हम एक सशक्त, समरस और आत्मनिर्भर भारत की दिशा में आगे बढ़ सकते हैं। यही भाव 'व्यक्ति निर्माण से राष्ट्र निर्माण' की भारतीय सोच को साकार करता है और यही स्वास्थ्य, स्वच्छता तथा नागरिक अनुशासन का वास्तविक उद्देश्य है।

भारतीय परंपरा में स्वच्छता का संबंध केवल बाह्य सफाई से नहीं, बल्कि आंतरिक निर्मलता से भी है। तुलसीदास कहते हैं- 'निर्मल मन जन सो मोहि पावा।' (उत्तरकाण्ड, दोहा 45)। अर्थात निर्मल मन वाला ही ईश्वर को प्राप्त करता है। यह निर्मलता हमें यह सिखाती है कि स्वच्छता केवल कर्मकाण्ड या औपचारिकता नहीं, बल्कि एक संस्कार है। आज स्वच्छ भारत जैसे अभियानों की मूल भावना भी यही है कि स्वच्छता को आदत और जीवनमूल्य बनाया जाए, न कि केवल सरकारी कार्यक्रम के रूप में देखा जाए।

निष्कर्ष : भारतीय परंपरा ने सदा यह स्वीकार किया है कि स्वस्थ शरीर और संतुलित मन के बिना न तो व्यक्ति अपने कर्तव्यों का निर्वहन कर सकता है और न ही समाज सुदृढ़ बन सकता है। गीता का संतुलन, रामचरितमानस का परहित भाव और रामायण की मर्यादा तीनों मिलकर यह सिखाते हैं कि व्यक्तिगत आचरण ही सामूहिक जीवन की दिशा तय करता है।

आधुनिक समय की चुनौतियां महामारी, पर्यावरण प्रदूषण, मानसिक तनाव और नागरिक अनुशासन की कमी यह संकेत देती हैं कि केवल कानून, योजनाएं या तकनीक पर्याप्त नहीं हैं। स्थायी समाधान तभी संभव है जब स्वास्थ्य, स्वच्छता और अनुशासन को बाहरी दायित्व नहीं, बल्कि आंतरिक संस्कार के रूप में स्वीकार किया जाए। जब नागरिक अपने स्वास्थ्य को समाज से, स्वच्छता को राष्ट्र से और अनुशासन को नैतिक कर्तव्य से जोड़कर देखता है, तब परिवर्तन स्वाभाविक हो जाता है।

अतः आवश्यकता इस बात की है कि हम भारतीय ग्रंथों में निहित इन मूल्यों को केवल पाठ या उपदेश के रूप में न रखें, बल्कि उन्हें अपने दैनिक जीवन में उतारें। स्वस्थ जीवनशैली अपनाना, सार्वजनिक स्वच्छता बनाए रखना और नागरिक अनुशासन का पालन करना ये तीनों मिलकर "व्यक्ति निर्माण से राष्ट्र निर्माण" की भारतीय अवधारणा को साकार करते हैं। यही सामूहिक कर्त्तव्य–बोध एक सशक्त, समरस और आत्मनिर्भर भारत की आधारशिला है, और यही इस विषय का वास्तविक निष्कर्ष है। ■

ISSN No. 2581-3528

डिजिटल उन्माद और सामाजिक विवेक का संकट : सोशल मीडिया के दुष्प्रभाव

प्रो. (डॉ.) राकेश चन्द्र (मनरागी)
प्रोफेसर, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

डिजिटल युग ने मनुष्य को अभिव्यक्ति के अभूतपूर्व अवसर दिए हैं। विचार, सूचना और संवेदना की आवाज अब किसी एक मंच तक सीमित नहीं रही। परंतु जिस माध्यम से लोकतंत्र, पारदर्शिता और सहभागिता सुदृढ़ होनी थीं, वही माध्यम आज अनेक बार समाज में भ्रम, विद्वेष और अविवेक का कारण बनता दिखाई देता है। सोशल मीडिया पर किसी को बदनाम करने, व्यक्तिगत खुंदक निकालने, ईर्ष्या या राजनीतिक महत्वाकांक्षा साधने के लिए तथ्यहीन आरोपों का चलन बढ़ता जा रहा है। 'न्याय दिलाने', 'अभिव्यक्ति की आजादी', 'समाजसेवा' या 'सरकार और संस्थाओं का विरोध' जैसे आकर्षक आवरणों में प्रस्तुत की गई सामग्री अक्सर सच से अधिक सनसनी पर आधारित होती है।

सबसे चिंताजनक पहलू यह है कि सोशल मीडिया पर ख्याति, लाइक और फॉलोअर्स की होड़ में व्यक्ति "कुछ भी कह देने" और "कुछ भी कर देने" को तत्पर दिखता है। एक अधूरी सूचना, एक कटा–छंटा वीडियो या संदर्भ से अलग किया गया कथन। बस इतना ही पर्याप्त होता है किसी व्यक्ति, संस्था या प्रक्रिया के विरुद्ध जनाक्रोश खड़ा करने के लिए। परिणामस्वरूप, जब विधिक या प्रशासनिक प्रक्रियाओं के तहत कार्यपालिका के अंतर्गत न्यायपालिका से जुड़ी कोई आवश्यक कार्रवाई की जाती है, तो बिना तथ्य समझे, बिना मामले की जटिलताओं को जाने, तीखी प्रतिक्रियाओं का सैलाब उमड़ पड़ता है। विवेक के स्थान पर आवेग और प्रमाण के स्थान पर पूर्वाग्रह हावी हो जाता है।

यह आवेगात्मक प्रतिक्रिया–तंत्र समाज में एकतरफा नरेटिव गढ़ता है। सत्य बहुआयामी होता है उसमें समय, साक्ष्य, संदर्भ और विधि की भूमिका होती है। किंतु सोशल मीडिया का एल्गोरिदमिक ढांचा अक्सर उसी सामग्री को आगे बढ़ाता है जो भावनाओं को भड़काए। इस प्रक्रिया में संतुलित दृष्टि, धैर्य और सुनवाई का अवसर सिकुड़ता चला जाता है। परिणामस्वरूप नकारात्मकता फैलती है, संस्थाओं पर अविश्वास बढ़ता है और सामाजिक ताने–बाने में दरारें पड़ती हैं।

अभिव्यक्ति की आजादी लोकतंत्र का प्राण है, पर वह निरंकुशता का लाइसेंस नहीं। स्वतंत्रता के साथ उत्तरदायित्व जुड़ा होता है। जब तथ्य जांच (फैक्ट–चेकिंग) को दरकिनार कर अफवाहें साझा की जाती हैं, जब निजी जीवन को सार्वजनिक तमाशा बनाया जाता है, या जब न्यायिक प्रक्रियाओं को 'ट्रायल बाय सोशल मीडिया' में बदल दिया जाता है, तब यह स्वतंत्रता स्वयं अपने उद्देश्य से भटक जाती है। ऐसी प्रवृत्तियां न केवल व्यक्ति विशेष को क्षति पहुंचाती हैं, बल्कि समाज के सामूहिक विवेक को भी कमजोर करती हैं।

एक और दुष्प्रभाव है– ध्रुवीकरण। सोशल मीडिया की तेज रफ्तार प्रतिक्रियाएं विचारों के बीच संवाद नहीं, बल्कि खेमेबंदी को बढ़ावा देती हैं। असहमति का स्थान गाली–गलौज ले लेती है और तर्क की जगह ट्रोलिंग। इस वातावरण में सच की तलाश कठिन हो जाती है और सामाजिक विश्वास का क्षरण होता है। जो संस्थाएं कानून और न्याय की रीढ़ हैं, उन पर अविश्वास पैदा होना अंततः लोकतांत्रिक ढांचे को ही कमजोर करता है।

इस चुनौती का समाधान सेंसरशिप या चुप्पी नहीं, बल्कि शिक्षित और जिम्मेदार सहभागिता है। एक शिक्षित समाज से अपेक्षा है कि वह सूचना को साझा करने से पहले उसके स्रोत, संदर्भ और सत्यता की जांच करे। त्वरित प्रतिक्रिया देने के बजाय धैर्य रखे; 'सुना' और 'देखा' के बीच के अंतर को समझे। नागरिक डिजिटल साक्षरता को अपनाएं, एल्गोरिदम की प्रकृति, क्लिक–बेट की रणनीति और भावनात्मक हेरफेर को पहचानें। संस्थाएं पारदर्शिता बढ़ाएं और समय पर तथ्यपरक जानकारी उपलब्ध कराएं ताकि अफवाहों के लिए स्थान न बचे।

अंततः, सोशल मीडिया स्वयं में न अच्छा है न बुरा, उसका उपयोग उसे परिभाषित करता है। यदि हम इसे न्याय, करुणा और विवेक के साथ प्रयोग करें, तो यह समाज को जोड़ सकता है; यदि आवेग, ईर्ष्या और महत्वाकांक्षा के साथ, तो यह हमें अंधे मोड़ की ओर ले जा सकता है। आज आवश्यकता इस बात की है कि हम डिजिटल नागरिकता के मूल्यों को अपनाएं, सत्य के प्रति निष्ठा, असहमति में शालीनता और अभिव्यक्ति में उत्तरदायित्व। तभी हम नकारात्मकता के इस जाल को कम कर पाएंगे और एक स्वस्थ, संतुलित तथा न्यायप्रिय समाज की दिशा में आगे बढ़ पाएंगे। ■

ISSN No. 2581-3528

भारतीय संविधान एवं नागरिक कर्त्तव्य

अतीत की विरासत, वर्तमान की चुनौतियां एवं भविष्य की संभावनाओं का सेतु

डॉ. शिवा शर्मा
असिस्टेंट प्रोफेसर - अंग्रेजी विभाग
झम्मन लाल पी.जी. कॉलेज, हसनपुर, अमरोहा

भारत केवल भौगोलिक सीमाओं में बंधा हुआ राष्ट्र नहीं है, बल्कि यह एक जीवंत सभ्यता, बहुरंगी संस्कृति और लोकतांत्रिक चेतना का विराट संगम है। इस विशाल राष्ट्र को एक सूत्र में बांधने वाला सबसे सशक्त सूत्र है, भारतीय संविधान। संविधान केवल कानूनों का संकलन नहीं, बल्कि यह भारत की आत्मा, उसकी आकांक्षाओं और उसके नागरिकों के सपनों का दस्तावेज है। इसी संविधान की आधारशिला पर नागरिकों के अधिकारों के साथ–साथ कर्त्तव्यों की भी परिकल्पना की गई है। वर्तमान समय, जब समाज तीव्र परिवर्तन, तकनीकी उछाल, वैचारिक टकराव और नैतिक चुनौतियों से गुजर रहा है, तब भारतीय संविधान और नागरिक कर्त्तव्यों की प्रासंगिकता और भी अधिक गहन हो जाती है।

26 जनवरी 1950 को लागू हुआ भारतीय संविधान विश्व का सबसे विस्तृत लिखित संविधान है। यह न केवल शासन व्यवस्था की संरचना तय करता है, बल्कि नागरिकों और राज्य के बीच संबंधों की मर्यादा भी निर्धारित करता है। संविधान की प्रस्तावना–"हम भारत के लोग..." इस बात का उद्घोष है कि सत्ता का मूल स्रोत जनता है। संप्रभुता, समाजवाद, पंथनिरपेक्षता और लोकतंत्र जैसे मूल्य संविधान को केवल एक विधिक ग्रंथ नहीं, बल्कि नैतिक और वैचारिक मार्गदर्शक बनाते हैं।

आज के समय में, जब लोकतंत्र के मूल्य वैश्विक स्तर पर चुनौतियों का सामना कर रहे हैं, भारतीय संविधान एक सशक्त ढाल के रूप में खड़ा दिखाई देता है। स्वतंत्र न्यायपालिका, विधायिका और कार्यपालिका के बीच संतुलन, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, समानता का अधिकार और धार्मिक स्वतंत्रता,ये सभी प्रावधान आज भी भारत को एक जीवंत लोकतंत्र बनाए हुए हैं।

बदलते समय में संविधान की जीवंतता : संविधान की सबसे बड़ी विशेषता उसकी लचीलापन है। संशोधन की प्रक्रिया के माध्यम से यह समय की आवश्यकताओं के अनुसार स्वयं को ढालने की क्षमता रखता है। डिजिटल युग में निजता का अधिकार हो या सामाजिक न्याय की अवधारणा, संविधान ने नए

संदर्भों में स्वयं को प्रासंगिक सिद्ध किया है। यह दर्शाता है कि संविधान कोई जड़ दस्तावेज नहीं, बल्कि एक जीवंत ग्रंथ है, जो समाज के साथ–साथ विकसित होता है।

आज जब सामाजिक असमानता, आर्थिक विषमता और पहचान की राजनीति जैसे प्रश्न उभर रहे हैं, संविधान का समानता और न्याय का सिद्धांत हमें यह स्मरण कराता है कि भारत की आत्मा समावेशन में निहित है, विभाजन में नहीं।

भारतीय संविधान का भाग 4अ जिसमें नागरिक कर्त्तव्यों का उल्लेख है, प्रायः अधिकारों की चमक में उपेक्षित रह जाता है। किंतु वास्तविक लोकतंत्र अधिकारों और कर्त्तव्यों के संतुलन से ही पुष्ट होता है। केवल अधिकारों की मांग और कर्त्तव्यों की उपेक्षा समाज को स्वार्थी और विघटनकारी बना सकती है।

भारतीय संविधान में निहित प्रमुख नागरिक कर्त्तव्य : वर्तमान में कुल 11 मौलिक कर्त्तव्य हैं जो निम्नलिखित है–

1. संविधान, उसके आदर्शों और संस्थाओं का सम्मान करना, तथा राष्ट्रीय ध्वज और राष्ट्रगान का आदर करना।

2. स्वतंत्रता संग्राम के उच्च आदर्शों का पालन करना।

3.भारत की संप्रभुता, एकता और अखंडता की रक्षा करना।

4.देश की रक्षा करना और आवश्यकता पड़ने पर राष्ट्रीय सेवा करना।

5.सभी भारतीयों में सद्भाव और भाईचारे की भावना को बढ़ावा देना, तथा महिलाओं की गरिमा के विरुद्ध प्रथाओं का त्याग करना।

6.समृद्ध सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण करना।

7. प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा और संवर्धन करना। वन, झील, नदी, वन्यजीव आदि की रक्षा करना और जीवों के प्रति करुणा रखना।

8.वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववाद और सुधार की भावना का विकास करना।

9.सार्वजनिक संपत्ति की रक्षा करना और हिंसा से दूर रहना।

10.व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों में उत्कृष्टता के लिए प्रयास करना, ताकि राष्ट्र निरंतर प्रगति करें।

11. 6 से 14 वर्ष की आयु के बच्चों को शिक्षा के अवसर प्रदान करना (माता–पिता/अभिभावकों का कर्त्तव्य)।

भारतीय संविधान ने अधिकारों को सुनिश्चित करके नागरिकों को सशक्त बनाया है, किंतु कर्त्तव्यों के माध्यम से उन्हें उत्तरदायी भी बनाया है। एक जागरूक नागरिक वही है जो अपने अधिकारों के प्रति सजग हो और अपने कर्त्तव्यों के प्रति प्रतिबद्ध। जब नागरिक मतदान करता है, कानून का पालन करता है, कर देता है और सामाजिक सौहार्द बनाए रखता है, तब लोकतंत्र केवल व्यवस्था नहीं, बल्कि संस्कृति बन जाता है।

आज के समय में जब व्यक्तिगत हित अक्सर सामूहिक हित पर हावी होते दिखते हैं, संविधान हमें यह याद दिलाता है कि राष्ट्र पहले है, व्यक्ति बाद में। यही भावना भारत को विविधताओं के बावजूद एक बनाए रखती है।

26 जनवरी 1950 को लागू हुआ भारतीय संविधान विश्व का सबसे विस्तृत लिखित संविधान है। यह न केवल शासन व्यवस्था की संरचना तय करता है, बल्कि नागरिकों और राज्य के बीच संबंधों की मर्यादा भी निर्धारित करता है। संविधान की प्रस्तावना-'हम भारत के लोग..' इस बात का उद्घोष है कि सत्ता का मूल स्रोत जनता है।

आज का भारत युवाओं का भारत है ऊर्जा, आकांक्षा और संभावनाओं से भरा हुआ। किंतु सोशल मीडिया के युग में अफवाहें, नकारात्मकता और असहिष्णुता भी तेजी से फैलती हैं। ऐसे समय में नागरिक कर्त्तव्य हमें संयम, विवेक और जिम्मेदारी की सीख देते हैं। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उपयोग करते समय यह स्मरण आवश्यक है कि हमारी वाणी समाज को जोड़ने वाली हो, तोड़ने वाली नहीं।

पर्यावरण संरक्षण का कर्त्तव्य आज केवल नैतिक आग्रह नहीं, बल्कि अस्तित्व का प्रश्न बन चुका है। जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण और संसाधनों के अंधाधुंध दोहन के बीच संविधान द्वारा प्रदत्त पर्यावरणीय चेतना अत्यंत प्रासंगिक हो उठती है। नागरिक यदि अपने कर्त्तव्यों को समझें, तो स्वच्छ भारत, हरित भारत और स्वस्थ भारत केवल नारे नहीं, बल्कि यथार्थ बन सकते हैं।

भारतीय संविधान एक प्रकाश स्तंभ है, जो अतीत की विरासत, वर्तमान की चुनौतियों और भविष्य की संभावनाओं के बीच सेतु का कार्य करता है। नागरिक कर्त्तव्य उस प्रकाश को दिशा देते हैं, ताकि लोकतंत्र केवल अधिकारों की मांग तक सीमित न रह जाए, बल्कि जिम्मेदार सहभागिता का उत्सव बन सके।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भारतीय संविधान और नागरिक कर्त्तव्यों की प्रासंगिकता पहले से कहीं अधिक है। यह हमें न केवल एक अच्छे नागरिक, बल्कि एक संवेदनशील मनुष्य बनने की प्रेरणा देता है। यदि हम संविधान की आत्मा को समझें और कर्त्तव्यों को जीवन में उतारें, तो भारत न केवल विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र, बल्कि सबसे सशक्त और नैतिक लोकतंत्र भी बन सकता है। यही संविधान की सच्ची विजय और नागरिक चेतना की सार्थकता है। ■

ISSN No. 2581-3528

युवाओं की ऊर्जा
नवाचार और नेतृत्व क्षमता से सामाजिक परिवर्तन की संभावनाएं

आभांशु द्विवेदी
शोधार्थी

भारत आज जिस दौर से गुजर रहा है, वह केवल आर्थिक या राजनीतिक परिवर्तन का दौर नहीं है, बल्कि सामाजिक पुनर्निर्माण का समय भी है। भारत विश्व गुरु बनने की बात करता है, लेकिन यह लक्ष्य केवल भाषणों या घोषणाओं से नहीं, बल्कि समाज की वास्तविक शक्ति से तय होगा और वह शक्ति है भारत का युवा।

भारत आज दुनिया का सबसे अधिक आबादी वाला देश है और उसी के साथ सबसे बड़ा युवा वर्ग भी यहीं है। यह मात्र आंकड़ा नहीं, बल्कि एक जिम्मेदारी है। क्योंकि इतिहास गवाह है कि जब किसी देश की युवा ऊर्जा सही दिशा में लगती है, तो समाज की दिशा बदल जाती है। और जब वही ऊर्जा दिशाहीन होती है, तो वही समाज अस्थिर भी हो सकता है।

युवाओं की ऊर्जा : परिवर्तन की पहली शक्ति : युवाओं में ऊर्जा स्वाभाविक होती है। उनमें प्रश्न पूछने की क्षमता होती है, असहमति जताने का साहस होता है और बदलाव की बेचैनी भी। यही ऊर्जा सामाजिक परिवर्तन की पहली सीढ़ी बनती है। भारत में समय-समय पर युवाओं ने इस ऊर्जा को सकारात्मक दिशा में उपयोग किया है। चाहे वह शिक्षा से जुड़े आंदोलन हों, पर्यावरण संरक्षण के अभियान हों या लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं में भागीदारी। आज का युवा केवल मतदान तक सीमित नहीं है, बल्कि वह नीतियों पर सवाल करता है, फैसलों का विश्लेषण करता है और अपनी राय बनाता है।

लेकिन यही ऊर्जा यदि भटका दी जाए, तो उसका स्वरूप बदल जाता है। हाल के वर्षों में हमने देखा है कि कैसे कुछ मुद्दों की आड़ में युवाओं को उकसाकर अशांति फैलाने की कोशिशें की गईं। प्रदूषण, आजादी या पहचान जैसे मुद्दों पर भावनात्मक नारे देकर युवाओं की ऊर्जा को हिंसा, अपराध या अराजकता की ओर मोड़ा गया। जब युवा शिक्षित होता है, जागरूक होता है और सही समय पर उसे मार्गदर्शन मिलता है, तो वही ऊर्जा समाज के लिए रचनात्मक बन जाती है। युवा संसद जैसे कार्यक्रमों में युवाओं की भागीदारी इसका उदाहरण है, जहां वे न केवल मुद्दों पर चर्चा करते हैं, बल्कि समाधान के दृष्टिकोण से सोचते हैं।

आज का युवा यह भी समझता है कि केवल लंबे घंटे काम करना ही उत्पादकता नहीं है। कार्य और जीवन के संतुलन को लेकर जो समझ नई पीढ़ी में आई है, वह भी सामाजिक सोच में बदलाव का संकेत है।

नवाचार : समस्याओं के नए समाधान : नवाचार को अक्सर केवल तकनीक तक सीमित कर दिया जाता है, जबकि वास्तविक नवाचार सोच में बदलाव से शुरू होता है। आज का भारतीय युवा इसी सोच का प्रतिनिधित्व करता है। कुछ वर्ष पहले तक युवाओं के सामने सफलता का एक ही रास्ता माना जाता था, अच्छी नौकरी। आज तस्वीर बदली है। अब युवा समस्या को पहचानकर उसका समाधान

खड़ा करने की दिशा में सोच रहा है।

स्टार्टअप संस्कृति इसका सबसे बड़ा प्रमाण है। उदाहरण के तौर पर जेप्टो जैसे प्लेटफॉर्म यह दिखाते हैं कि कैसे कॉलेज की उम्र में शुरू हुआ विचार देशभर में उपभोक्ता व्यवहार को बदल सकता है। यह केवल तेज डिलीवरी का मॉडल नहीं, बल्कि समय और शहरी जीवन की जरूरत को समझने का उदाहरण है।

इसी तरह देश के अलग–अलग तकनीकी संस्थानों और कॉलेजों में युवा कृषि, स्वास्थ्य और रक्षा जैसे क्षेत्रों में नवाचार कर रहे हैं। हाल के वर्षों में छात्र–स्तर पर बनाए गए ड्रोन समाधान, कम लागत वाले मेडिकल डिवाइस, और स्मार्ट खेती से जुड़े उपकरण इस बात का संकेत हैं कि नवाचार अब प्रयोगशाला तक सीमित नहीं रहा, बल्कि जमीनी जरूरतों से जुड़ चुका है।

डिजिटल प्लेटफॉर्म ने भी युवाओं को अपनी सोच और समाधान समाज तक पहुंचाने का माध्यम दिया है। शिक्षा के क्षेत्र में ऑनलाइन लर्निंग मॉडल, स्वास्थ्य में टेली–मेडिसिन, कृषि में डिजिटल मार्केटप्लेस और परिवहन में स्मार्ट मोबिलिटी समाधान, ये सभी युवा नवाचार के उदाहरण हैं।

महत्वपूर्ण बात यह है कि तकनीक के साथ–साथ युवा अपनी सांस्कृतिक पहचान को भी साथ लेकर चल रहा है। पारंपरिक ज्ञान, संगीत, भाषा और भारतीय मूल्यों को आधुनिक मंचों पर नए रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है। इससे यह स्पष्ट होता है कि नवाचार और संस्कृति एक–दूसरे के विरोधी नहीं, बल्कि पूरक हैं।

नेतृत्व क्षमता : दिशा देने वाली शक्ति : अक्सर कहा जाता है कि नेतृत्व अनुभव से आता है। यह बात आंशिक रूप से सही है, लेकिन आज के भारत में यह पूरा सच नहीं है। भारत की जनसंख्या संरचना खुद इस धारणा को चुनौती देती है। भारत की जनगणना के अनुमानों के अनुसार भारत की कार्यशील आबादी का बड़ा हिस्सा 35 वर्ष से कम आयु का है। इसका अर्थ यह है कि निर्णय लेने की प्रक्रिया में युवा अब हाशिए पर नहीं, बल्कि केंद्र में हैं। यह बदलाव केवल संख्या का नहीं, बल्कि भूमिका का है। आज का युवा केवल निर्देशों का पालन करने वाला वर्ग नहीं रहा। वह नीति, प्रशासन, सामाजिक मुद्दों और अर्थव्यवस्था पर अपनी राय बना रहा है। भारत निर्वाचन आयोग के आंकड़े बताते हैं कि हाल के चुनावों में युवा मतदाताओं की भागीदारी में लगातार वृद्धि हुई है, जो यह संकेत देता है कि युवा केवल वोट नहीं कर रहे, बल्कि नेतृत्व की दिशा तय कर रहे हैं।

राजनीति के बाहर भी यह परिवर्तन स्पष्ट है। सामाजिक संगठनों, स्टार्टअप्स और सामुदायिक अभियानों में युवा नेतृत्व आगे आ रहा है। ये युवा नेतृत्व भीड़ को भड़काने के बजाय मुद्दों को समझने, समाधान खोजने और जिम्मेदारी लेने पर जोर देता है। यह नेतृत्व पद से नहीं, बल्कि दृष्टि से पहचाना जाता है।

हालांकि, यह तस्वीर पूरी तरह आदर्श नहीं है। बिना नैतिक आधार के नेतृत्व समाज को दिशा देने के बजाय भ्रम की स्थिति पैदा कर सकता है। सोशल मीडिया के दौर में त्वरित लोकप्रियता की चाह कई बार युवाओं को सतही नेतृत्व की ओर ले जाती है, जहां प्रभाव ज्यादा होता है लेकिन जिम्मेदारी कम। इसीलिए आज भारत को ऐसे युवा नेतृत्व की आवश्यकता है, जिसमें ऊर्जा और नवाचार के साथ मूल्यबोध और जवाबदेही भी जुड़ी हो। अनुभव और युवा शक्ति का संतुलन ही वह आधार है, जो समाज को स्थायी दिशा दे सकता है।

सामाजिक परिवर्तन कैसे होता है : जब युवाओं की ऊर्जा को सही दिशा मिलती है, तो नवाचार जन्म लेता है। जब नवाचार को नेतृत्व का मार्गदर्शन मिलता है, तो समाधान स्थायी बनते हैं। और जब समाधान समाज तक पहुंचते हैं, तभी वास्तविक परिवर्तन होता है। आज भारत बेरोजगारी, शिक्षा की असमानता, डिजिटल विभाजन और सामाजिक तनाव जैसी समस्याओं से जूझ रहा है। ये समस्याएं दशकों से चली आ रही हैं। लेकिन आज पहली बार ऐसा लग रहा है कि इनके समाधान जमीनी स्तर से उभर रहे हैं। वैश्विक स्तर पर बढ़ते तनाव और संघर्षों के बीच यदि भारत को स्थिर और सशक्त बनना है, तो उसे अपने युवाओं पर भरोसा करना ही होगा। यही युवा भारत को न केवल संकटों से निकाल सकते हैं, बल्कि उसे विश्व गुरु की दिशा में ले जा सकते हैं।

चुनौतियां और सीमाएं : यदि युवाओं की ऊर्जा दिशाहीन हो जाए, तो वही शक्ति विनाशकारी भी बन सकती है। दंगे, अपराध, नशे की लत, यौन हिंसा, यह सब उसी ऊर्जा का विकृत रूप है। डिजिटल दुनिया में अति–व्यस्त युवा आज आलस्य, गलत संगति और त्वरित प्रसिद्धि की चाह में फंसता जा रहा है। सोशल मीडिया पर इंस्टेंट फेम की दौड़ ने पढ़ने, सोचने और सीखने की प्रक्रिया को कमजोर किया है। रील्स की लत किताबों से दूरी बढ़ा रही है। यह स्थिति चेतावनी है। यदि समय रहते सही शिक्षा, सही प्रशिक्षण और सही मार्गदर्शन नहीं दिया गया, तो यह ऊर्जा समाज के खिलाफ भी जा सकती है।

युवाओं की भूमिका केवल परिवर्तन की कल्पना तक सीमित नहीं होनी चाहिए। उन्हें यह समझना होगा कि ऊर्जा, नवाचार और नेतृत्व तीनों तब ही सार्थक हैं, जब उनके साथ जिम्मेदारी जुड़ी हो। भारत का भविष्य युवाओं के हाथ में है, यह कहना आसान है। लेकिन असली सवाल यह है कि क्या युवा इस जिम्मेदारी को समझने और निभाने के लिए तैयार हैं। ■

ISSN No. 2581-3528

समर्पण : एक साधना

मानस वर्मा
प्राध्यापक अर्थशास्त्र, महाराजा अग्रसेन कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय

समर्पण यह केवल एक शब्द नहीं है अपितु अपने भीतर एक विराट अर्थ समेटे हुए है। समर्पण कोई पल भर में उत्पन्न होने वाली भावना नहीं है, न ही केवल वाणी को विशेष बनाने का कोई शब्द है यह भाग तो जीवन की निरंतर साधना है। अपने पूजनीय सनातनी पूर्वजों से हमने यही सीखा है कि भगवान शिव शक्ति के श्रीचरणों में स्वयं की आत्मा को परमात्मा में अर्पित कर देना ही सच्चा समर्पण है। अपने पूजनीय देशप्रेमी पूर्वजों के बलिदानों से यह संस्कार पाया है कि राष्ट्र के लिए कुछ कर गुजरना ही जीवन का सार है और यही एक सच्चा समर्पण है। समर्पण का तरीका सभी के लिए अलग–अलग हो सकता है परंतु समर्पण का अर्थ एक ही है, अपने 'मैं' को व्यापक 'हम' में विलीन कर देना और अपने स्वार्थों को किसी बड़े उद्देश्य के लिए न्योछावर कर देना। हर व्यक्ति का समर्पण अलग–अलग रूपों में प्रकट होता है।

जब इस कलयुग में अधिक लोग अपने स्वार्थ को पूर्ण करने के लिए केवल अपने बारे में सोचते है भले ही उस सोच से और उसके कार्य से किसी को नुकसान ही क्यों न पहुंच जाए। ऐसे में नियंत्रण बनाए रखने के लिए कुछ लोग आज भी समाज की सेवा में अपने समय और श्रम को समर्पित करते है। उदाहरण के लिए यह पत्रिका ही पढ़ लीजिए और आप देखेंगे कि इसमें कई लेखकों ने अपने लेख में कहीं समर्पित लोगों की कहानी लिखी होंगी। हम हाल ही में हुए प्रेरणा विमर्श 2025 का भी उदाहरण ले सकते हैं। ऐसे कार्यक्रम करने का बस एक ही उद्देश्य है की समर्पण की भावना सभी के अंदर जागे ताकि देश का हर एक नागरिक किसी ने किसी रूप में अपने आप को समर्पित कर सके और अपना जीवन सफल बना सके। यही समर्पण जीवन को साधारण से असाधारण बनाता है।

यह भी एक कटु सत्य है कि आज कई लोग समर्पण का अर्थ जानते तो हैं और उस पर प्रभावशाली भाषण भी दे लेते हैं परंतु जीवन में उसे उतारना भूल जाते हैं। वाणी और करनी का यह अंतर समाज को भ्रमित करता है और ऐसे लोगों से बचना भी चाहिए। शायद इसी कारण से हमारा देश में अपने पूर्वजों की जयंती और पुण्यतिथियाँ मनाई जाती हैं ताकि हम उनके समर्पण के कर्मों से सीख सकें और उनके जीवन से समर्पण का वास्तविक अर्थ समझ सकें। स्मरण मूल्यों का होता हैं। उन मूल्यों का, जिन पर उन्होंने अपना जीवन अर्पित कर दिया।

कुछ दिन पूर्व जब देवरथ ने मंत्रों को स्मृति के सहारे बिना देखे श्रद्धा के साथ

उच्चारित किया, तो वह केवल एक रिकॉर्ड नहीं बना था। अपितु वह युवाओं के लिए एक संदेश बन गया है कीं अपने सनातन धर्म को जानो, समझो और जींयो। हर मंत्र में अपार शक्ति निहित है और वह शक्ति समर्पण की लॉ को जगाने में पूर्ण सक्षम है। देवरथ ने मंत्रों को स्मृति के सहारे उच्चारित करके अपने आपको भगवान के श्रीचरणों में समर्पित किया। यह समर्पण बाहरी प्रदर्शन नहीं, आंतरिक जागरण है जहाँ व्यक्ति अपने भीतर की ऊर्जा को दिव्यता की ओर मोड़ देता है।

समर्पण का एक और सशक्त रूप हमें हाल ही के समय में तब देखने को मिला, जब भारतीय सेना ने 'ऑपरेशन सिंदूर' को सफलतापूर्वक अंजाम दिया। यह केवल एक सैन्य अभियान नहीं था बल्कि यह राष्ट्र के प्रति अद्‌भुत समर्पण का उदाहरण था। यह ऑपरेशन उन परिवारों को समर्पित था जिन्होंने अपने आप को देश के लिए समर्पित कर दिया था। जब-जब हमारी सेना ऐसा शौर्य और पराक्रम का परिचय देती है, तब देशवासियों का सीना गर्व से चौड़ा हो जाता है। ऐसे में मीडिया द्वारा बनी डॉक्यूमेंटरी केवल घटनाओं का चित्रण नहीं करतीं बल्कि वे युवाओं के भीतर देश के लिए समर्पित होने की प्रेरणा जगाती हैं। यह प्रेरणा बताती है कि समर्पण केवल सीमा पर ही नहीं, हर नागरिक के जीवन में आवश्यक है।

इसी क्रम में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के स्वयंसेवक का उदाहरण भी उल्लेखनीय है। सोचिए, किसी व्यक्ति को स्वयंसेवक बनने की क्या आवश्यकता है? वह भी तो अपने निजी स्वार्थों में जीवन बिता सकता है, अपने आराम और सुविधा को प्राथमिकता दे सकता है। फिर क्यों वह देश और समाज के लिए स्वयं को समर्पित करता है? क्यों वह हर आपदा में आगे बढ़कर

लोगों की सहायता करता है? सच पूछिए तो कोई बाहरी मजबूरी नहीं है। परंतु उसके भीतर गीता का वह भाव जीवित है, जो समर्पण को कर्मयोग से जोड़ता है। वह समझता है कि निष्काम कर्म ही सच्ची पूजा है, और सेवा ही साधना।

भारत की भूमि पर गीता और पुराण केवल ग्रंथ नहीं, जीवन-दर्शन हैं। वे हमें सिखाते हैं कि समर्पण का अर्थ पलायन नहीं, बल्कि सक्रिय सहभागिता है। अपने कर्त्तव्यों से भागना नहीं, उन्हें पूरी निष्ठा से निभाना ही समर्पण है। जब किसान खेत में बीज बोता है, शिक्षक ज्ञान का दीप जलाता है, डॉक्टर रोगी की सेवा करता है, तब-तब समर्पण अपने विविध रूपों में प्रकट होता है।

यह भी एक कटु सत्य है कि आज कई लोग समर्पण का अर्थ जानते तो हैं और उस पर प्रभावशाली भाषण भी दे लेते हैं परंतु जीवन में उसे उतारना भूल जाते हैं। वाणी और करनी का यह अंतर समाज को भ्रमित करता है और ऐसे लोगों से बचना भी चाहिए। शायद इसी कारण से हमारा देश में अपने पूर्वजों की जयंती और पुण्यतिथियाँ मनाई जाती है ताकि हम उनके समर्पण के कर्मों से सीख सकें और उनके जीवन से समर्पण का वास्तविक अर्थ समझ सकें।

समर्पण हमें जोड़ता है ईश्वर से, राष्ट्र से, समाज से और अंततः स्वयं से। यह हमें भीतर से मजबूत बनाता है, अहंकार को शिथिल करता है और करुणा को विस्तार देता है। आज जब दुनिया स्वार्थ की दौड़ में आगे बढ़ रही है, तब समर्पण ही वह मूल्य है जो मनुष्य को मनुष्य बनाए रखता है।

अंत में, भारत की पावन भूमि पर जन्म लेने वाले हम सभी के लिए यह आह्वान है कि हम भी किसी न किसी रूप में समर्पित होना सीखना होगा। अपने कार्य, अपने विचार और अपने जीवन को किसी उच्च उद्देश्य के लिए अर्पित करना होगा। क्योंकि जब व्यक्ति समर्पण करता है, तभी समाज सशक्त होता है और जब समाज सशक्त होता है, तभी राष्ट्र उज्ज्वल भविष्य की ओर अग्रसर होता है। समर्पण यही जीवन की सार्थकता है, यही हमारी सनातन विरासत का अमूल्य उपहार। ■

ISSN No. 2581-3528

आत्मनिर्भरता की प्रेरणा बनीं आगरा की महिलाएं

आगरा, उत्तर प्रदेश : आज की महिलाएं घर की चारदीवारी से निकलकर हर क्षेत्र में अपनी पहचान बना रही हैं। आत्मनिर्भर बनने की दिशा में वे नए-नए कार्य अपनाकर समाज के लिए प्रेरणा बन रही हैं। ऐसी ही एक प्रेरणादायक पहल आगरा में देखने को मिली है, जहां स्वयं सहायता समूह से जुड़ी महिलाओं ने ई-रिक्शा चलाकर अपने जीवन को नई दिशा देने का निर्णय लिया। इन महिलाओं ने छह महीने का प्रशिक्षण पूरा कर लिया है और अब पिंक ड्राइविंग लाइसेंस के लिए आवेदन किया है। लाइसेंस मिलने के बाद वे न केवल खुद आत्मनिर्भर बनेंगी, बल्कि अपने परिवार की आर्थिक स्थिति भी मजबूत करेंगी। विकास खण्ड फतेहाबाद की मालती कुशवाह इस पहल की मुख्य प्रेरणा हैं। वे 'जय मां संतोषी' स्वयं सहायता समूह का संचालन करती हैं और 14 अन्य समूहों का मार्गदर्शन भी करती हैं। अन्य शहरों में महिलाओं की सफलता से प्रेरित होकर उन्होंने आगरा में इस पहल की शुरुआत की। यह पहल साबित करती है कि यदि अवसर और हौसला मिले, तो महिलाएं हर राह पर सफलता की मिसाल कायम कर सकती हैं।

अलीगढ़ की महिलाएं बनीं आत्मनिर्भरता की पहचान

अलीगढ़, उत्तर प्रदेश : आज महिलाएं आत्मनिर्भर बनकर न केवल अपने परिवार की आर्थिक स्थिति मजबूत कर रही हैं, बल्कि अन्य महिलाओं के लिए भी रोजगार के अवसर पैदा कर रही हैं। उत्तर प्रदेश के अलीगढ़ जिले के हरदुआगंज क्षेत्र के बड़ा गांव उखलाना की रहने वाली सुजाता राघव इसकी एक बेहतरीन मिसाल हैं। बीए तक शिक्षित सुजाता ने वर्ष 2022 में राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन से जुड़कर स्वरोजगार की शुरुआत की। शुरुआत उन्होंने अकेले की, लेकिन धीरे-धीरे अन्य महिलाओं को भी अपने साथ जोड़ा। जब समूह में 10 महिलाएं शामिल हो गईं, तो 'श्री राघव ग्रामीण महिला आजीविका स्वयं सहायता समूह' का गठन किया गया। पहले रूई की सफेद बत्तियां बनाई गईं, बाद में बढ़ती मांग को देखते हुए रंगीन बत्तियां और फिर धूपबत्ती, धूप स्टिक व धूप कोन का उत्पादन शुरू किया गया। अपने उत्पादों को पहचान दिलाने के लिए सुजाता ने 'श्री शुभांग' नाम से ब्रांड पंजीकृत कराया। आज समूह से जुड़ी महिलाएं प्रतिमाह लगभग 7 से 8 हजार रुपये की कमाई कर रही हैं। 'श्री शुभांग' ब्रांड के उत्पाद अब स्थानीय दुकानों के साथ-साथ सरकारी कैंटीन, मंदिरों और अन्य राज्यों तक भी पहुंच चुके हैं। महिलाओं की आर्थिक सशक्तता ही परिवार, समाज और देश की प्रगति की मजबूत नींव है।

ISSN No. 2581-3528

ग्रामीण महिलाओं ने चिप्स से लिखी आत्मनिर्भरता की कहानी

हरिद्वार, उत्तराखण्ड : महिला सशक्तिकरण और आत्मनिर्भर भारत की सोच अब गांवों में भी मजबूती से साकार होती दिखाई दे रही है। जी हां, उत्तराखण्ड के हरिद्वार जिले का एक छोटा सा गांव इसका उदाहरण बन गया है, जहां ग्रामीण महिलाएं अपने परिश्रम और सामूहिक प्रयास से न केवल अपनी आजीविका चला रही हैं, बल्कि दूसरों के लिए भी प्रेरणा बन रही हैं। खेती से लेकर उत्पाद तैयार करने और उसे बाजार तक पहुंचाने तक की पूरी जिम्मेदारी अब महिलाएं स्वयं संभाल रही हैं...

हरिद्वार के नौकराग्रांट गांव की 25 महिलाएं प्रकाशमय बहुद्देश्यीय स्वायत्त सहकारिता से जुड़कर 'चिप्सोना' किस्म के आलू की खेती कर रही हैं। वर्ष 2023 में ग्रामोत्थान परियोजना के तहत शुरू हुई इस पहल ने महिलाओं को आत्मविश्वास दिया। अच्छी फसल के बाद महिलाओं ने आलू बेचने के साथ-साथ उससे चिप्स, नमकीन और पापड़ बनाने का निर्णय लिया, जिससे उनकी आमदनी बढ़ सकी।

प्रशिक्षण और मशीनों की मदद से महिलाओं ने गुणवत्तापूर्ण उत्पाद तैयार करना शुरू किया। आज उनके उत्पाद 'ग्रामीण बाइट' नाम से बाजार में बिक रहे हैं। ऑफलाइन के साथ-साथ ऑनलाइन प्लेटफॉर्म पर भी इनकी मांग बढ़ रही है। यह पहल सिद्ध करती है कि सही मार्गदर्शन और सहयोग मिले तो ग्रामीण महिलाएं भी आत्मनिर्भर बनकर विकास की मजबूत कड़ी बन सकती हैं..

पुश्तैनी काम से प्रीति ने बनाई पहचान

आगरा, उत्तर प्रदेश : महिला सशक्तिकरण की मिसाल पेश करती आगरा के चंदसौरा गांव की रहने वाली प्रीति ने अपने हुनर और हौसले से न केवल खुद को आत्मनिर्भर बनाया, बल्कि कई अन्य महिलाओं के लिए भी रोजगार के नए रास्ते खोले हैं। ससुराल से मिले शहद उत्पादन के पुश्तैनी काम को उन्होंने आधुनिक तरीके से आगे बढ़ाया और इसे एक सफल व्यवसाय का रूप दिया, जिससे आज दर्जनों परिवारों की आजीविका जुड़ी हुई है। बता दें सामाजिक विज्ञान में पोस्टग्रेजुएट प्रीति ने स्वयं सहायता समूह के माध्यम से सरकारी योजनाओं का लाभ लिया और बैंक ऋण लेकर शहद प्रोसेसिंग यूनिट की शुरुआत की। आज उनका 'जीबी गोल्ड हनी' आगरा समेत कई शहरों में अपनी पहचान बना रहा है। आने वाले समय में कारोबार के विस्तार के साथ और अधिक महिलाओं को रोजगार देने की योजना है।

प्रेरणा विमर्श 2025 की झलकिंया

विभिन्न मंचों से हुआ केशव संवाद पत्रिका का विमोचन